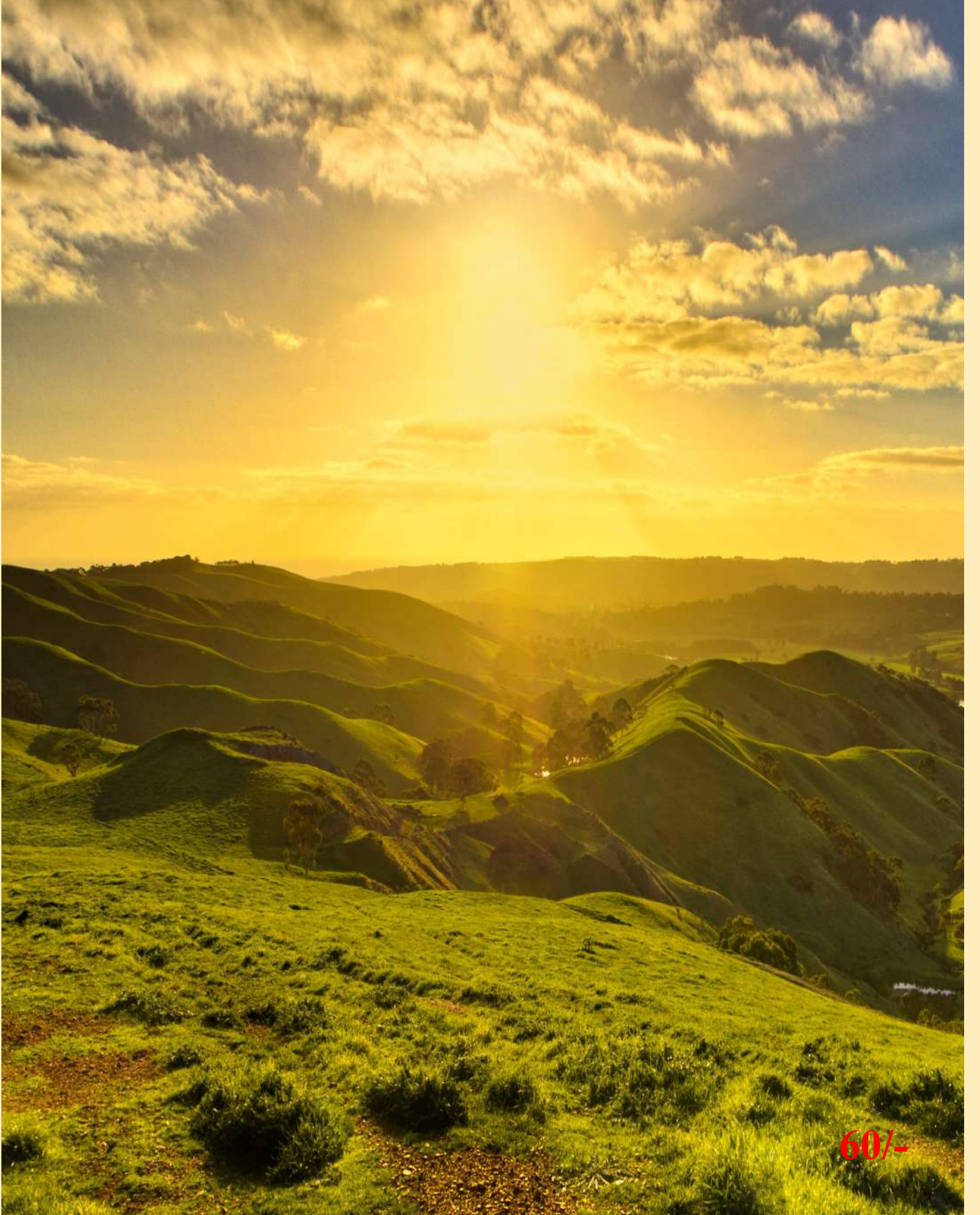


संपर्क भाषा भारती

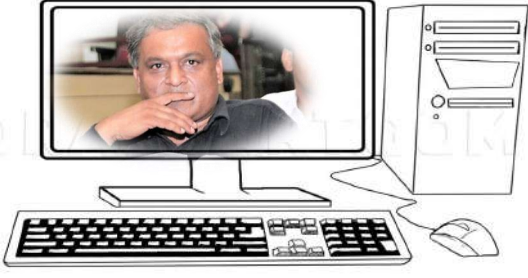
वर्ष-34, अंक-391

वर्ष 1990 से प्रकाशित कथा साहित्य-समाज को समर्पित राष्ट्रीय मासिकी, मई—2023, RNI-50756



60/-

संपर्क भाषा भारती, मई—2023



अपनी बात...

प्रिय पाठकगण,

फरवरी महीने में दिल्ली से अलीगढ़ की यात्रा की थी, उद्देश्य था अप्रतिम कथाकार और व्यंग्य कवि श्री सुरेन्द्र सुकुमार जी से व्यक्तिगत मुलाकात करना, उनके कथा साहित्य को संकलित कर पुनः उन्हें पुस्तकाकार देना। श्री सुरेन्द्र जी बहुत ही फक्कड़ किस्म के औघड़ साहित्यकार/रचनाकार हैं। लंबा तगड़ा शरीर इन दिनों समय की वक्रता के चलते कुछ असमंजस में है किन्तु उनके हौसलों की उड़ान अब भी बुलंद है। पत्नी सुधा का निधन उनके लिए विकट कठिनता ले कर आया है।

सुरेन्द्र सुकुमार हिन्दी के वह कथाकार हैं जिनकी पहली कहानी 'अगिहाने' 1975 में सारिका में छपी थी। कहानी कई मायनों में विवादास्पद बन गई। कोर्ट केस हुए। किन्तु ये सब सुरेन्द्र सुकुमार की हिम्मत को नहीं डिगा पाए। बल्कि उन की लेखनी तप कर कंचन में बदल गई। उनके समकालीन कथाकार उनके लेखन के सामने बौने हैं, यही वजह है कि उन्होंने सुरेन्द्र सुकुमार जैसे विराट कथाकार को अपनी महफिल से दूर ही रखा। सुरेन्द्र सुकुमार दैहिक रूप से ही छह फुट नहीं हैं। वे अस्सी के दशक के एक मात्र ऐसे कथाकार हैं जिन की रचनाओं ने समकालीन पत्रिकाओं में अपना वर्चस्व बनाए रखा।

सुरेन्द्र सुकुमार एक ऐसे अद्भुत कहानीकार हुए जिनकी कहानियाँ 1976 से वर्ष 2000 तक (जब तक कि हिन्दी की लोकप्रिय पत्रिकाओं का अवसान नहीं हो गया) बराबर उस समय की शीर्ष पत्रिकाओं जैसे सारिका, धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान, हंस, रविवार, आजकल में नियमित प्रकाशित होती रहीं।

यह मेरा सौभाग्य है कि उनकी 38 कहानियों में से 34 कहानियाँ मुझे हस्तगत हुई हैं। अधिकांश कथाएँ धर्मयुग जैसी पत्रिका में प्रकाशित हुई हैं। अतः उन कहानियों के स्तर का जायज़ा पाठक स्वयं लगा सकते हैं। धर्मयुग में स्वर्गीय धर्मवीर भारती कहानियाँ प्रकाशित करते हुए कथाकार को उसका स्तर भी समझा दिया करते थे। बड़े से बड़े कथाकार की कहानी प्रकाशित करते हुए वे बॉक्स में लिख देते थे कि '....फलाने की धर्मयुग में यह पहली कहानी है।'

सुरेन्द्र सुकुमार की कहानियों और उनके संस्मरणों का संकलन शीघ्र ही पाठकों को उपलब्ध हो इस दिशा में काम चल रहा है। आपकी पत्रिका को हर्ष है कि सुरेन्द्र सुकुमार पर एक विशेषांक जुलाई में वह प्रकाशित करने जा रही है।

1983 में जब मैं कॉलेज से बाहर निकला तो दिल्ली युनिवर्सिटी की छात्र राजनीति पर मेरा पहला आलेख उस समय की प्रतिष्ठित राजनैतिक पत्रिका साप्ताहिक 'दिनमान' में प्रकाशित हुआ था। उस समय 'दिनमान' भारत की 'टाइम' या 'न्यूज़ वीक' पत्रिका के समान हुआ करता था। आप मेरी स्थिति समझ सकते होंगे कि क्या रही होगी। जब मैं 'दिनमान' के कार्यालय 10, दरियागंज में गया और सहायक संपादक (शायद जितेंद्र गुप्त) से मिला तो मुझे देख कर उन्हें आश्चर्य हुआ मैं कॉलेज से निकला 22 वर्षीय नव-युवक था। खैर, मुझे 'दिनमान' में श्री उदय प्रकाश से बहुत समर्थन प्राप्त हुआ, वे विदेशी मामले देखते थे। मैं उन्हें अफ्रीका, सूडान, चाड, नामीबिया, इथियोपिया जैसे देशों की रपट तत्काल बना दे दिया करता था।

यहीं मैंने 'सारिका' और 'दिनमान' के स्टाफ को देखा जिनसे जिंदगी के अलग-अलग मरहलों पर प्रगाढ़ता मिली।

इधर, सारिका वाले स्वर्गीय रमेश बत्रा की पत्नी जया के कहने पर श्री त्रिलोकदीप से संपर्क हुआ। बीते दिनों जब 'दिनमान' जाता था तो लिख पढ़ कर चला आता था। ला-वजह किसे से चेप नहीं होता था। स्वभाव से अंतर्मुखी और संकोची था मितभाषी भी। पान, बीड़ी, सिगरेट, चाय या अन्य कोई आसव नहीं लेता था सो लिख कर सीधा कॉलेज लौट जाता था जहां मैं कॉलेज क्रिकेट पर ज्यादा ध्यान देता था या फिर रेडियो स्टेशन जहां युव-वाणी की कार्यक्रम संयोजिकाओं वेद क्वात्रा, कमला शास्त्री, करुणा श्रीवास्तव, डॉली बनर्जी का मैं चहेता था।

मैं त्रिलोकदीप पर लौट कर आता हूँ त्रिलोक दीप 'दिनमान' के आधार स्तंभों में से एक रहे हैं। 1965 से वे 'दिनमान' से ऐसे जुड़े कि फिर उनका उससे तलाक नहीं हुआ। वे स्वर्गीय सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' जी को अपना गुरु मानते हैं। लोकसभा में हिन्दी टाइपिस्ट की नौकरी से निकाल कर अज्ञेय जी उन्हें 'दिनमान' में लेकर आए। समय की आँधी ने बेनेट कोलमैन एंड कंपनी में बड़े-बड़े दरख्त गिरा दिए। 'दिनमान' में अज्ञेय, मनोहर श्याम जोशी, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, रघुबीर सहाय, घनश्याम पंकज इत्यादि आए और चले गए किन्तु त्रिलोकदीप वहाँ अंत तक डटे रहे।

'दिनमान' के बंद होने के बाद वे संजय डालमिया द्वारा शुरू किए गए हिन्दी 'संडे मेल' के कार्यकारी संपादक बने।

मैं चाहता था कि त्रिलोकदीप 'दिनमान' का दिनमान बनें। मुझे हर्ष है कि उन्होंने मेरी बात स्वीकार कर ली है। शीघ्र ही आप इसे पुस्तक रूप में देखेंगे। त्रिलोकदीप से बातचीत में पता चला कि वे भोपाल से प्रकाशित होने वाली राजनैतिक पत्रिका 'शिखरवार्ता' के लिए भी लिखते रहे हैं। मैंने उन्हें बताया कि सरकारी हिन्दी अधिकारी बनने से पहले 1986 में मैं उस पत्रिका का पहला दिल्ली कार्यालय प्रमुख बना था।

त्रिलोकदीप अपने जीवन के नौवें दशक के समीप हैं, उनके वचन हम सब के लिए आशीर्वचन हैं। पत्रिका का जून विशेषांक हिनी पत्रकारिता के जीवित आदिस्तंभ त्रिलोकदीप को समर्पित होगा।

अगस्त का विशेषांक अग्रज डॉक्टर धनंजय सिंह को समर्पित होगा धनंजय जी पर चर्चा आगामी अंक में करूंगा.....

आप सब सहयोग की कृपा बनाए रखें.....

सादर,
सुधेन्दु ओझा

पत्रिका में प्रकाशित लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक, मुद्रक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली 110092

संपर्क भाषा भारती, मई—2023

दो

मई—2023

क्रम संः	शीर्षक :	लेखक :	पृष्ठ संख्या :
1	संपादकीय		2
2	पाठकनामा/सभा समाचार		5-9
3	कवीन्द्र रवीन्द्र विमर्श	कृष्ण कुमार यादव	10-13
4	शर्मिदा होने को मजबूर आधी आबादी	सोनम लववंशी	14-16
5	कविता	तृप्ति मिश्रा	16
6	समय की आवश्यकता संयुक्त परिवार	गोवर्धन दास बिन्नाणी	17-18
7	कविता	आलोक रंजन	18
8	कविता	संघमित्रा रायगुरु	18
9	शोषण का पर्याय	रंजना	19-20
10	कविता	गिरेन्द्र सिंह भदौरिया	20
11	कविता	सूर्य प्रकाश मिश्र	20
12	गांधी जी की हमसफर : कस्तूरबा	आकांक्षा यादव	21-25
13	लघुकथाएँ	दीपक कुमार	25
14	महिलाएं और समानता की मानसिकता	पद्मा अग्रवाल	26-28
15	कविता	केशव शरण तथा जया रावत	28
16	कविता	केशव शरण	29
17	कहानी : शुक्रिया दोस्त	प्रतिमा शर्मा पुष्प	30-62
18	कहानी : मुक्केबाज़ अमृता	पद्मा अग्रवाल	32-37
19	कविता	व्यग्र पांडे	37
20	कविता	सविता चड्ढा	37
21	कहानी: मरहम	किरण शुक्ला	38-40
22	लघुकथा	दीपक कुमार	40
23	कहानी : मधुमक्खी	श्यामल बिहारी महतो	41-45
24	लघुकथा	नीना सिन्हा	46
25	बच्चों की पहेली	आशा पाण्डेय ओझा	46
26	कविता	सोनल अंजु तथा विजय कनौजिया	46
27	पुस्तक समीक्षा : धुआँ धुआँ जिंदगी	मीनू त्रिपाठी	47-49
28	आशा शैली साहित्यिक पुरस्कार से सम्मानित		49
29	पुस्तक समीक्षा : दो मिसरे	डॉ उपमा शर्मा	50-51
30	लघुकथा	सिद्धेश्वर	52
31	कहानी : कृतज्ञता	आशा पाण्डेय ओझा	53-54

पत्रिका में प्रकाशित लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक, मुद्रक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली-110092
फोन : 9868108713

क्रम सं:	शीर्षक :	लेखक :	पृष्ठ संख्या :
32	लघुकथा	कृष्ण चन्द्र महादेविया	54
33	वीर सावरकर को पत्र	कल्पना दीक्षित	55
34	कविता	चन्द्र कांता सिवाल	55
35	संस्मरण : बुरे काम का बुरा नतीजा	विनोद क्वात्रा	56
36	मूलचंद उर्फ मुलुआ	सुरेन्द्र सुकुमार	57-58
37	कविता	नीरू मित्तल 'नीर'	58
38	कविता	अशोक जैन	58
39	संस्मरण : मैं घूरे की लौकी साधो!	रामानुज अनुज	59-61
40	कविता	राजेश पाठक	61

संपर्क भाषा भारती के आगामी तीन विशेषांक



जून 2023

त्रिलोक दीप (लब्धप्रतिष्ठ पत्रकार)

जुलाई 2023



सुरेन्द्र सुकुमार (लब्धप्रतिष्ठ कथाकार एवं व्यंग्य कवि)



अगस्त 2023

डॉ धनंजय सिंह (लब्धप्रतिष्ठ नव-गीतकार)

सभा समाचार

बिहार के रूपेश को मिलेगा "विश्व रिकॉर्ड बाबा साहेब अंबेडकर सम्मान- 2023"

बिहार के सिवान जिले के चैनपुर गाँव के रूपेश कुमार को 'विश्व रिकॉर्ड बाबा साहेब अंबेडकर सम्मान-2023' के लिए सम्पूर्ण भारत के 67 उत्कृष्ट व्यक्तियों में चुना गया है। बिहार के रूपेश कुमार को सामाजिक एवं शिक्षा के क्षेत्र में विशेष योगदान के लिए चुना गया है। इस सम्मान का आयोजन 'सत गुरु कबीर आश्रम सेवा संस्थान, बड़ी खाटू, नागौर, राजस्थान के द्वारा किया जाएगा। दिनांक 26 मार्च 2023 को संस्था के संस्थापक भारत भूषण महंत, श्री डॉ। नानक दास जी महाराज जी के आज्ञानुसार डॉ।अभिषे कुमार जी ने इसकी घोषणा की। इस सम्मान समारोह का आयोजन भव्य तरीके से नागौर, राजस्थान, में संविधान निर्माता डॉक्टर भीम राव अम्बेडकर की जयंती के उपलक्ष्य में 14 अप्रैल 2023 को किया जाएगा। इससे पहले 2023 में ही रूपेश को डॉ। अम्बेडकर अंतर्राष्ट्रीय हाल, नई दिल्ली में 'कबीर सम्मान-2023' से नवाजा गया था। अंबेडकर सम्मान रूपेश को मिलने पर युवा साहित्यकारों/सामाजिक कार्यकर्ताओं/शिक्षाविदों का मनोबल काफी बढ़ जाएगा तथा एक विश्वास की नई झलक दिखाई देगी। साहित्य/शिक्षा/सामाजिक जगत में इनकी पृथक पहचान है। इससे पहले इन्हें राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तीन सौ से अधिक साहित्य, सामाजिक/शिक्षा सम्मानों से सम्मानित किया जा चुका है। रूपेश की चार पुस्तकें- मेरी कलम रो रही है, मेरा भी आसमान नीला होगा, कैसे बताऊँ तुझे एवं 'मैं सड़क का खिलाड़ी हूँ' दिल्ली, असम, गुजरात से प्रकाशित हो चुकी हैं। रूपेश के संपादन में भी तीन साहित्यिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। रूपेश अभी शोध के साथ ही प्रतियोगिता परीक्षा की तैयारी कर रहे

हैं। रूपेश अब्दुत प्रतिभा के धनी हैं, जिसके कारण इनकी रचनाओं को देश- विदेशों के पत्र पत्रिकाओं में जगह मिल चुकी है। भौतिक विज्ञान का छात्र होते हुए भी साहित्य में अपना पैर जमाए हुए हैं। रूपेश वर्तमान में साहित्यिक, सामाजिक एवं संस्कृति संस्था 'अन्तर्राष्ट्रीय सखी साहित्य परिवार(रजि) के बिहार अध्यक्ष एवं ज्ञानोत्कर्ष अकादमी एवं शोध केंद्र भारत के संस्थापक हैं। इस उपलब्धि पर इनको सुप्रीम कोर्ट दिल्ली की लॉ ऑफिसर अनुजा मिश्रा, मुजफ्फरपुर की लेखकर निधी कुमारी, जुही मिश्रा, कंट्री ऑफ इंडिया की लखनऊ की पत्रकार रीमा सिन्हा, कवयित्री प्रिया सिंह, राजस्थान की प्रोफेसर डॉक्टर टीना राव, कवयित्री, नर्तकी, एंकर लक्ष्मी देवी शर्मा, मधुबनी से शिक्षिका इन्दु कुमारी, मध्य प्रदेश से शिक्षिका गरिमा कांसकार, असम से डॉक्टर दीपिका सुतोदीया, मिर्जापुर से कवयित्री रेखा चौरसिया, पूजा गुप्ता, पटना से रिचा प्रसाद, हरियाणा से शिक्षिका सीमा रानी मिश्रा, दिल्ली से प्रख्यात कवि डॉ। आर सी यादव, कवयित्री आशा दिनकर, कर्नाटक से प्रोफेसर डॉ। पीयूष राजा, चैनपुर से देवेश, अजीत पंडित, गोपाल यादव, भोपाल से कवयित्री मेधा राठी, फरीदाबाद से लिटरेरी जनरल सरिता कुमार एवं समस्त परिवार के सदस्यों इत्यादि गणमान्य व्यक्तियों ने बधाई दी। □□□

साहित्य एवं कला के क्षेत्र में सुपर स्टार लेखक हैं डॉ किशोर सिन्हा :

पटना : 10/04/2023

बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं डॉ किशोर सिन्हा, जिन्होंने अवकाश प्राप्ति के पश्चात कविता, कहानी और आत्मकथा लिखने में अपनी पूरी शक्ति झोंक दिया है और उसी का परिणाम है डॉ

किशोर सिन्हा द्वारा लिखित आत्मकथा 'तीस साल लंबी सड़क', जिसे पढ़ते हुए कहानी, उपन्यास, रूपक का मिश्रित रूप पढ़ने का एहसास होता है। डॉ किशोर सिन्हा के लेखन में कोई बनावटीपन नहीं कोई कलाबाजी नहीं। बनावटीपन से दूर डॉ किशोर सिन्हा की रचनाएं, उनकी सृजनात्मक जीवंतता को रेखांकित करती है। साहित्य की लगभग सभी विधाओं में प्रकाशित उनकी पुस्तकें एवं कला क्षेत्र के विभिन्न आयामों में उनके योगदान को देखते हुए कहा जा सकता है कि साहित्य एवं कला के क्षेत्र से उभरे हुए सुपर स्टार लेखक हैं डॉ किशोर सिन्हा।

भारतीय युवा साहित्यकार परिषद के तत्वाधान में गूगल मीट के माध्यम से फेसबुक के अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका के पेज पर, हेलो फेसबुक कथा सम्मेलन का संचालन करते हुए संस्थापक अध्यक्ष एवं संयोजक सिद्धेश्वर ने उपरोक्त उद्गार व्यक्त किया।

डॉ किशोर सिन्हा की चार पुस्तकों पर समीक्षात्मक टिप्पणी अपनी डायरी में प्रस्तुत करते हुए सिद्धेश्वर ने विस्तार से कहा कि - "तीस साल लंबी सड़क" नाम से 304 पृष्ठों की इस वृहत पुस्तक में उन्होंने अपने जीवन के बहुमूल्य 30 साल की लंबे सफर को समेटने का सार्थक प्रयास किया है। जो बिल्कुल उनके निजी अनुभव और उनके जीवन के विभिन्न आयामों को बखूबी बयां कर रही है। और कुछ नहीं तो एक लेखक के भीतर के अंतर्द्वंद को, बखूबी देखा जा सकती है इस पुस्तक में, जहां पर उन्होंने छात्र जीवन से लेकर, आंदोलन के दौरान युवावस्था में जेल जाने और अपने अंतरंग मित्रों की अंतरंगता को बखूबी रेखांकित किया है।

कोई भी साहित्यिक रचना, हमारे भीतर की जीवंतता का एहसास करा जाए, तो वह सफल हो जाता है, चाहे वह कहानी हो, उपन्यास और आत्मकथा हो, संस्मरण हो या कुछ भी। किंतु इतनी मोटी पुस्तक को देखकर एक सवाल पाठकों के सामने जरूर उभर कर आता



है कि आम पाठकों की व्यस्तता देखकर, जब लंबी लंबी कहानियां और उपन्यास पढ़ने से पाठक कतरा रहे हैं, और बहुत सारे कथाकार लघुकथा लिखने के लिए बेचैन दिख रहे हैं, ऐसी स्थिति में इतनी भारी भरकम पुस्तक अधिकांश लोगों के द्वारा, क्या सचमुच पूरी तरह पढ़ी जा सकती है?

वैसे लेखन का पहला उद्देश्य लेखक की आत्मिक संतुष्टि होती है, जिस उद्देश्य में डॉ किशोर सिन्हा सफल दिख पड़ते हैं। बात उन्होंने हम सब लोगों के बीच की है, इसलिए बहुत ही प्रेम पूर्वक पढ़ी भी जाएगी इसमें कोई दो मत नहीं है। और लेखक समुदाय के द्वारा भी, इस पुस्तक का स्वागत अवश्य होगा इसमें भी कोई दो मत नहीं है। इस मायने से भी साहित्य जगत में अपनी अलग छाप छोड़ पाने में डॉ किशोर सिन्हा सक्षम हैं।

मुख्य अतिथि वरिष्ठ साहित्यकार डॉ किशोर सिन्हा ने कहा कि - यह कहना गलत होगा कि आज के पाठक लंबी कहानियां या उपन्यास पढ़ना नहीं चाहते हैं। लघु फिल्मों या लघुकथाएं अधिक जरूर देखी या पढ़ी जा रही है। किंतु बड़ी बड़ी फिल्मों या उपन्यास आज भी देखें और पढ़े जा रहे हैं।

पूरे कथा सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए नई दिल्ली की वरिष्ठ कथा लेखिका डॉ मनोरमा गौतम ने पढ़ी गई कहानियों पर समीक्षात्मक टिप्पणी प्रस्तुत करते हुए विस्तार से कहा कि - हेतो फेसबुक कथा सम्मेलन के इस वर्चुवल

मंच पर आदरणीय सिद्धेश्वर जी के संयोजन में कहानी पाठ का आयोजन किया गया। इतने सुन्दर कहानी पाठ का आयोजन करने के लिए मैं सिद्धेश्वर जी का साधुवाद करती हूँ। साहित्य और साहित्यकार को परखने में सिद्धेश्वर जी की दृष्टि व उनकी बौद्धिकता अतुलनीय है। वो भारत के कोने - कोने से साहित्यकार रूपी मोती को चुन - चुनकर लाते हैं। यही उनकी सबसे बड़ी उपलब्धि है। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ किशोर सिन्हा जी थे। सिद्धेश्वर जी ने उनके साहित्यिक गतिविधियों से हमें रु ब रु करवाया। बहुमूल्य प्रतिभा के धनी डॉ किशोर सिन्हा जी वास्तव में साहित्यजगत में एक अनमोल सितारा हैं। सिद्धेश्वर जी के शब्दों में कहें तो - डॉ किशोर सिन्हा जी सुपर स्टार हैं। हमने डॉ किशोर सिन्हा जी की कहानी उनकी जुबानी सुनी। कहानी का शीर्षक था - "एक सपने की उम्र" सिन्हा जी की यह कहानी बहुत ही संवेदनशील तथा हृदयस्पर्शी थी। इसमें सिन्हा जी ने सपने के टूटने - बनने के साथ - साथ व्यक्ति के जीवन में आए उतार - चढ़ाव का वर्णन किया है। सच में सबसे खतरनाक होता है सपनों का मर जाना।

कार्यक्रम की अध्यक्षता डॉ मनोरमा गौतम ने अपनी अध्यक्षीय टिप्पणी करने के बाद अपनी कहानी का पाठ भी किया। कहानी का शीर्षक था - "अपना पराया" इसमें डॉ।

मनोरमा गौतम ने यह बताने का प्रयास किया है कि आज हम बेशक शैक्षिक और वैज्ञानिक उन्नति कर रहे हैं किन्तु मानवीयता के स्तर पर अभी हम बहुत ही पिछड़े हुए हैं। आज व्यक्ति अपने आस - पड़ोस, अपने समाज के प्रति संवेदनाहीन हो गया है। आज के दौर में अपने भी पराये होते जा रहे हैं यदि ऐसे समय में कोई पराया अपना बनकर मुश्किल दिनों में हमारा साथ दे तो वही अपना है। ऐसे ही लोगों के कारण कहीं न कहीं थोड़ी बहुत इंसानियत अभी जिंदा है।

उसके बाद जयंत जी ने अपनी कहानी का पाठ किया। उनकी कहानी का शीर्षक था - "दरकती जमीन" इसमें जयंत जी ने ऐसे लोगों के बारे में बताया है जो सड़को पर, बसों में, रेलवे स्टेशन पर बॉक्स लिए खड़े रहते हैं चंदा मांगने के लिए बदले में वो दिखाते हैं कि वो इन पैसों से समाज के हित में काम करेंगे लेकिन वास्तव में तो वे अपना ही हित करते हैं। कुछ ऐसे लोगों के कारण हम उनकी भी मदद करने से कतराते हैं जो लोग वास्तव में मदद के हकदार हैं। इस कहानी में भी पुस्तकालय बनाने के नाम पर कुछ बहुरूपियों द्वारा लेखक ठगा जाता है।

उसके बाद ऋचा वर्मा ने कहानी सुनाई - "प्रेम की रेखाएं" इस कहानी में उन्होंने स्मिता और अमित के प्रेम के बारे में बताया है। लेकिन एक मोड़ पे आकर अमित अपने व्यक्तिगत स्वार्थ हेतु स्मिता को छोड़कर चला जाता है। उसके बाद अमित के गम में डूबी स्मिता आत्महत्या करने जाती है तभी उसको समीर आकर बचा लेता है।

उसके बाद विजया कुमारी मौर्य ने "बुद्ध तुम कहां मिलोगे" कहानी का पाठ किया। इसमें उन्होंने नौकर और मालिक के बीच की खाई को दिखाया है। लालाजी की पत्नी और साले के माध्यम से नौकर मनीष को लाला जी के कत्ल के इल्जाम में फंसाना और नौकर को उसकी औकात याद दिलाना कि नौकर नौकर ही होता है मालिक की बराबरी कभी नहीं कर सकता इसका सबसे बड़ा उदाहरण हैं।

उसके बाद स्निग्धा जी ने "पगली" नामक कहानी का पाठ किया। इस कहानी में उन्होंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि समाज के लोग मानसिक रूप से कमजोर व्यक्ति के साथ किस तरह का अमानवीय व्यवहार करते हैं। उसे स्नेह और सहानुभूति की जगह दुत्कार तथा

उसका उपहास उड़ाते हैं। जोकि मानवीयता के स्तर पर बहुत घृणित कार्य है। उसके बाद रश्मि लहर जी ने " दादा जी का चश्मा " नामक कहानी का पाठ किया। जिसमें उन्होंने दो पीढ़ियों के लगाव की बात की है। इस कहानी में दादा जी अपनी पोती की फीस जमा करने के लिए अपने चश्मे का सोने का फ्रेम बेंच देते हैं। इससे पता चलता है कि हमारे बुजुर्ग अपनी नई पीढ़ी को बनाने के लिए अपनी जरूरतों का भी परित्याग कर देते हैं। उसके बाद सपना चंद्रा जी ने " स्वेत " नामक कहानी का पाठ किया। जिसमें उन्होंने एक ऐसे व्यक्ति के बारे में बताया है जोकि अंधा है लेकिन लोगों को कई बार उसे देखकर भ्रम हो जाता है। वास्तविकता में उसके जीवन में स्वेत रंग के अलावा कुछ होता ही नहीं है। गार्गी राय जी ने " एक विवाह ऐसा भी " नामक कहानी का पाठ किया। उसमें उन्होंने विवाह में दहेज की प्रथा का खुलासा किया है। दहेज नामक कोड आज भी हमारे समाज में विद्यमान है। लोग दिखावा तो करते हैं हम कुछ नहीं मांग रहे हैं लेकिन न न करते - करते सब मांग लेते हैं। कई बार तो मांग न पूरी होने पर मंडप से ही बारात लेकर लौट जाते हैं। इस कहानी में भी यही होता है। अंत में मीना कुमारी परिहार जी ने " सैनिक " नामक कहानी का पाठ किया। इस कहानी में राह ताक रही सैनिक की माँ बेटे के स्थान पर तिरंगे में लिपटे बेटे के मृत शरीर को देख आंसू बहाने के बदले उसकी शहादत पर गर्व करती है। सच में बहुत विशाल होता है सैनिक के माँ का हृदय। कार्यक्रम के अंत में सिद्धेश्वर जी ने सभी कहानीकारों का धन्यवाद ज्ञापन किया और भविष्य में होने वाले कार्यक्रमों के बारे में लोगों को अवगत करवाया। विशिष्ट अतिथि वरिष्ठ कथाकार जयंत ने कहा कि सोशल मीडिया के माध्यम से साहित्य आज आम आदमी तक पहुंच पाने में सक्षम है। जहां एक ओर बड़ी-बड़ी पत्रिकाएं बंद हो रही है, सोशल मीडिया पर साहित्यिक चर्चा और प्रस्तुति बढ़ गई है। इस मायने से भी सिद्धेश्वर द्वारा चलाया जा रहा इस तरह का साहित्यिक सम्मेलन ऐतिहासिक और बहु उपयोगी है। इनके अतिरिक्त पूरे देश के अन्य प्रांतों से जुड़े कथाकारों ने भी एक से बढ़कर एक कहानियां प्रस्तुत किया। डॉ किशोर सिन्हा ने / मनोरमा गौतम ने अपने पराए / ऋचा वर्मा ने प्रेम की रेखाएं / जयंत ने दरकती जमीन / रश्मि लहर ने

दादा जी का चश्मा / सिग्धा सिंह सुधीर ने पगली / नमिता सिंह ने माँ / सपना चंद्रा ने श्वेतक / विजय कुमारी मौर्य विजय ने बुद्ध तुम कहां मिलोगे? / और गार्गी राय तथा मीना कुमारी परिहार ने समकालीन कहानियों के माध्यम से दर्शकों का दिल जीत लिया। इन कथाकारों के अतिरिक्त कहानी एवं कथा सृजन पर अपनी बेबाक टिप्पणी प्रस्तुत करने वाले में प्रमुख है निर्मल कुमार डे, सुहेल फारुकी, सुधा पांडे, प्रियंका श्रीवास्तव शुभ्र, भगवती प्रसाद, सुधीर, मिथिलेश दीक्षित,

□□□

समकालीन कविता में सार्थक हस्तक्षेप कर रहे हैं डॉ अनुज प्रभात : सामाजिक विसंगतियों से संवाद करती है समकालीन कविताएं : डॉ नीलू अग्रवाल

इसलिए समकालीन कविताओं को मात्र अखबार की कतरन कहकर अस्वीकार कर देना बेमानी होगी। क्योंकि छंद के बाहर भी आज बहुत सारी सार्थक कविताएं रची जा रही है। लेकिन एक सच यह भी है कि समकालीन कविता के नाम पर और मुक्तछंद कविता के नाम पर ढेर सारे ऐसे कवि भी

आज अपने विचार बिल्कुल सपाट बयानी ढंग से प्रस्तुत कर रहे हैं, जो कहीं-कहीं एक अच्छा विचार तो हो सकता है, एक अच्छा चिंतन हो सकता है, डायरी का अंश हो सकता है, आलेख का अंश भी हो सकता है, किंतु कविता तो कदापि नहीं। क्योंकि कविता के लिए उस रचना में काव्यबिंब का होना, उतना ही जरूरी है जितना गीत या गज़ल में छंद का होना। लेकिन दुर्भाग्य से ऐसी सार्थक कविताएं लिखने वाले बहुत कम लोग आज कविता के मैदान में हैं! और मुझे तब और भी खुशी होती है जब इस कविता के मैदान में डॉ अनुज प्रभात जैसे युवा कवि अपनी मुक्त छंद कविता के साथ सार्थक हस्तक्षेप करते हैं।

गूगल मीट के माध्यम से फेसबुक के अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका के पेज पर, हेलो फेसबुक कवि सम्मेलन का संचालन करते हुए संयोजक सिद्धेश्वर ने उपरोक्त उद्गार व्यक्त किया।

मुख्य अतिथि कवि कथाकार डॉ अनुज प्रभात ने कहा कि --कविता लेखन युगीन परंपरा है इसे काल और परिस्थिति के अनुरूप लिखा भी गया है किंतु उसके पाठक तब भी कम थे आज भी कम है लेकिन एक सच यह भी है कि पाठक का कम होना और कविता से पाठक का दूर होना दो अलग-अलग बातें हैं। इस आधुनिकता वादी में आज हास्य के प्रति



रुझान तो है पर विचार , गंभीर चिंतन, भाव, अर्थ और संदेश परक कविता के प्रति लोगों का ध्यान कम हो गया है। जिससे कि कविता से दूर होते पाठक करीब आ सके और इस प्रयास में सिद्धेश्वर जी कहीं अधिक सफल रहे हैं जिन्होंने आज गूगल मीट के द्वारा कविता को पाठकों के समक्ष रखने का प्रयास कर रहे हैं। मैं इनके इस प्रयास की सराहना करता हूँ और भविष्य में इनकी सफलता की कामना भी करता हूँ जिससे कि पाठक कविता के करीब आ सके। अध्यक्षीय उद्बोधन में डॉ नीलू अग्रवाल ने कहा कि -डॉ अनुज प्रभात एक मजबूत कथाकार हैं और साथ ही वे कविताओं में भी दखल रखते हैं। उनकी कहानियाँ सामाजिक विसंगतियों के बात करती हैं परंतु जब आप उनकी कविताओं से गुजरते हैं तो आप पाएंगे कि उसमें उनकी निजी भावनाएं ज्यादा प्रबल होती जाती हैं। दूसरे सत्र के आरंभ में डॉ नीलू अग्रवाल ने अपनी दो सारगर्भित कविताओं का पाठ किया - हुईं तुमसे मुलाकात, हम जो आए इस शहर में, एक आशियाना बनाने का जी चाहता है! / सपना चंद्रा ने - मौसम कर देती है लाचार मुझे, चाहिए एक बार उसका दीदार मुझे! / कालजाई घनश्याम ने-हो जिससे प्यार कोई बेशुमार करता है, उसी से मिलने को दिल बार-बार करता है! / सिद्धेश्वर ने जितना भीतर जाता हूँ, थाह नहीं पाता हूँ, आकाश सी गहराई है, तुझ में ऐ जिंदगी! / अनीता सिद्धि ने मुख मंडल पर तेज और सूर्य की चमकीली आभा! / लोकनाथ मिश्र ने अज्ञ यज्ञ में बैठा मंत्र ठीक से बोल ना पाता! / राज प्रिया रानी ने नूतन तिथि लिए आई देखो चैती नव वर्ष, मौन शब्दों से अभिवादन किया नववर्ष! / रजनी श्रीवास्तव अनंता ने -माना कि मुश्किल भरी है जीवन की राहें, अगर पतवार बन जाए तुम्हारी बाहें / डॉ शरद नारायण खरे ने प्रीति प्रेम जीवन की शोभा, नित यशागान / डॉ अलका वर्मा ने आओ हम पेड़ लगाएं, प्रकृति की खैर मनाएं! / इंदु उपाध्याय ने मेरे चांद कभी तो आओ, मेरी मुंडेर पर, देखो तो आज व्रत रखा है मैंने भी! / विकास सोलंकी ने -मैं निरंतर कर रहा हूँ बस यही चिंतन मनन, औपचारिक रह गए क्या सिद्ध संतों के कथन? / चंद्रिका व्यास ने अंतिम क्षण में प्रभु तेरी भक्ति में मैं खो जाऊँ, जोगन बन मीरा बन जाऊँ! / शशि दीपक कपूर ने - कौन कहता है चांद तन्हा है अकेला है, आसमां

में चांद को तारों ने घेरा है! / डॉ सुधा पांडे ने नवरात्र के उत्सव संग 9 दिनों का त्योहार, मां प्रथम दिन शैलपुत्री जब धरती पर उतरी! / डॉ पूनम सिन्हा श्रेयसी ने बात ही बात पर हो रही तल्लियां, बेतरह पीठ ढो रही तल्लियां / अशोक अंजुम ने वफाएं लड़खड़ाती है, भरोसा टूट जाता है / "जरा सी भूल से रिश्तो का धागा टूट जाता है! / गार्गी राय ने औरत ही औरत की दुश्मन क्यों, अपनी ही साया से इतनी नफरत क्यों? की पढ़ी गई कविताओं के अलावा एलएन मिश्रा, शिल्पी त्रिवेदी, मीरा जोहर, नलिनी मिश्रा आदि ने भी अपनी-अपनी गीत गजल कविताओं से समा बांधा। इनके अतिरिक्त कुमार गौरव, हरि नारायण, मिथिलेश दीक्षित, पूनम, कृष्ण मुरारी, परमेश्वर सिंह, सुधा पांडे, राजेंद्र राज, संतोष

आरंभ चैरिटेबल फाउंडेशन की" विविध रंगी काव्य गोष्ठी" संपन्न - रचनाकारों ने पढ़ी एक से बढ़कर एक रचनाएं।

आरंभ चैरिटेबल फाउंडेशन साहित्यिक संस्था की गत दिवस "विविध रंगी आरंभ काव्य गोष्ठी" 9 मसाला रेस्टोरेंट, भोपाल हाट में गरिमामय माहौल में संपन्न हुई, जिसमें रचनाकारों ने अपनी विभिन्न विषयों पर प्रेरक रचनाओं से खूब वाहवाही बटोरी। कवयित्री निरूपमा खरे ने पढ़ा -

ये नाखुश औरतें,
चीखती- चिल्लाती, रार करती
खुद से भी बेजार औरतें।
साहित्यकार उषा सोनी ने पढ़ा -
घर- घर में उत्सव की छाई उमंग है,
द्वार- द्वार ऑगन में बज रहे मृदंग हैं।
वरिष्ठ कवयित्री शोफालिका श्रीवास्तव ने अपनी रचना से श्रोताओं का मन मोह लिया -
मुट्टी में वर्तमान है, मन में अतीत है,
अधरों पर कांपता जीवन संगीत है।
इसी क्रम में शोभा ठाकुर ने भी अपनी प्रेरक रचना से दर्शकों की खूब वाहवाही बटोरी।
बेटा हो या बेटी हो तुम,
सुदृढ़ स्तंभ हो जीवन आधार के!

कर्म के रथ पर सजे,
उन्नति के शीर्ष तक पहुंचे हो तुम।
कार्यक्रम का संचालन कर रही बिन्दु त्रिपाठी ने पढ़ा -
मैं सफलता के शिखर पर खड़ी मुस्कुराऊंगी,
और तुम हाथ मलते रह जाओगे।
मैं छू लूंगी आसमा की बुलंदी, तुम देखते रह जाओगे।
कार्यक्रम की विशिष्ट अतिथि मनी सक्सेना ने कहा -
समय बदलता है,
दे जाता है गौरव गाथा,
कुछ सीख,
यही है मानव की दरकार।
विशिष्ट अतिथि डा रेखा भटनागर ने कहा -
रंग और रेखाएँ रह जाएंगी,
स्मृतियाँ शेष रह जाएंगी।
कार्यक्रम की अध्यक्षता कर रही आरंभ फाउंडेशन की अध्यक्ष "अनुपमा अनुश्री" ने अपने प्रेरक उद्बोधन में साहित्य में आई विसंगतियों की ओर इंगित किया - मंचों पर पढ़ी जा रही अश्लील कविताओं पर कटाक्ष करते हुए लेखन के कमजोर स्तर पर चिंता जाहिर की और कहा कि साहित्य का स्तर उन्नत होना चाहिए। झूठी लोकप्रियता के फेर में साहित्य का स्तर गिरना नहीं चाहिए। उत्कृष्ट, प्रांजल भाषा, संवेदनाओं व काव्य तत्वों के बिना कविता अधूरी है। प्रकाशित हो सकती है, जोर- शोर से पढ़ी जा सकती है लेकिन हृदय को प्रकाशित नहीं कर सकती। कार्यक्रम का सफल संचालन बिन्दु त्रिपाठी ने किया। इस अवसर पर साहित्यप्रेमियों ने कविताओं का रसास्वादन किया।

अर्ध विराम इस तरह लगाएँ : मिथिलेश दीक्षित, (गलत : मिथिलेश दीक्षित ,)

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली 110092

नवोदय विद्यालय स्थापना दिवस : पुरा छात्रों ने स्कूली दिनों को याद किया



कहा कि हमारे व्यक्तित्व के निर्माण में नवोदय का बहुत योगदान रहा है। हम वहाँ जिंदगी को समझना और सही मायनों में जीना सीखते हैं। श्री काशी विश्वनाथ धाम में सीआरपीएफ असिस्टेंट कमांडेंट श्री विनोद सिंह ने कहा कि नवोदय परिवार आज भी बेहद संगठित है और लोग एक दूसरे से दिल से जुड़े हैं। सुख-दुःख में एक दूसरे के साथ जिस तरह से खड़े रहते हैं, वह मन में हैरत ही नहीं गर्व भी पैदा करता है।

सम्मानित होने वाले नवोदयंस- इस अवसर पर नवोदय विद्यालय के पुरा विद्यार्थियों को सम्मानित भी किया गया। वाराणसी परिक्षेत्र के पोस्टमास्टर जनरल कृष्ण कुमार यादव, बीएचयू हिंदी विभाग प्रोफेसर डॉ। सत्यपाल शर्मा, फिजिक्स प्रोफेसर डॉ। सुरेंद्र कुमार, बरेका चीफ इंजीनियर रणविजय सिंह, श्री काशी विश्वनाथ धाम में सीआरपीएफ असिस्टेंट कमांडेंट विनोद सिंह, डीआरएम ऑफिस में इंजीनियर अभिषेक सिंह, बिजली विभाग अधिशाषी अभियंता चंद्रशेखर चौरसिया, सर सुन्दरलाल चिकित्सालय, बीएचयू में सीनियर नर्सिंग ऑफिसर ममता मिश्रा, मंचीय कवि दानबहादुर सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर डॉ। पंकज गौतम, असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ। सत्यपाल यादव, पुलिस उप निरीक्षक सुनील गौड़, डॉ। प्रदीप गौतम, विमलेश कुमार, अमित त्रिपाठी इत्यादि सम्मानित हुए।

कार्यक्रम में मंचीय कवि दान बहादुर सिंह ने अपनी कविताओं से समां बांधा वहीं तमाम पुरा विद्यार्थियों ने सांस्कृतिक कार्यक्रमों की प्रस्तुति कर लोगों का दिल जीत लिया। कार्यक्रम का संयोजन सोमेश चौधरी, महेंद्र मिश्र 'मोहित', शालिन्दी और देवव्रत ने किया, वहीं संचालन अनुराधा व अभिषेक ने किया।

महेंद्र मिश्र 'मोहित', संयोजक - नवोदयन्स इन बीएचयू विधि संकाय, बनारस हिंदू विश्वविद्यालय

**पूर्ण विराम : (सही : सम्मानित हुए।)
(गलत : सम्मानित हुए।)**

देश भर में 16 लाख से अधिक नवोदयन्स का नेटवर्क समाज को नई दिशा देने के लिए तत्पर - पोस्टमास्टर जनरल कृष्ण कुमार यादव

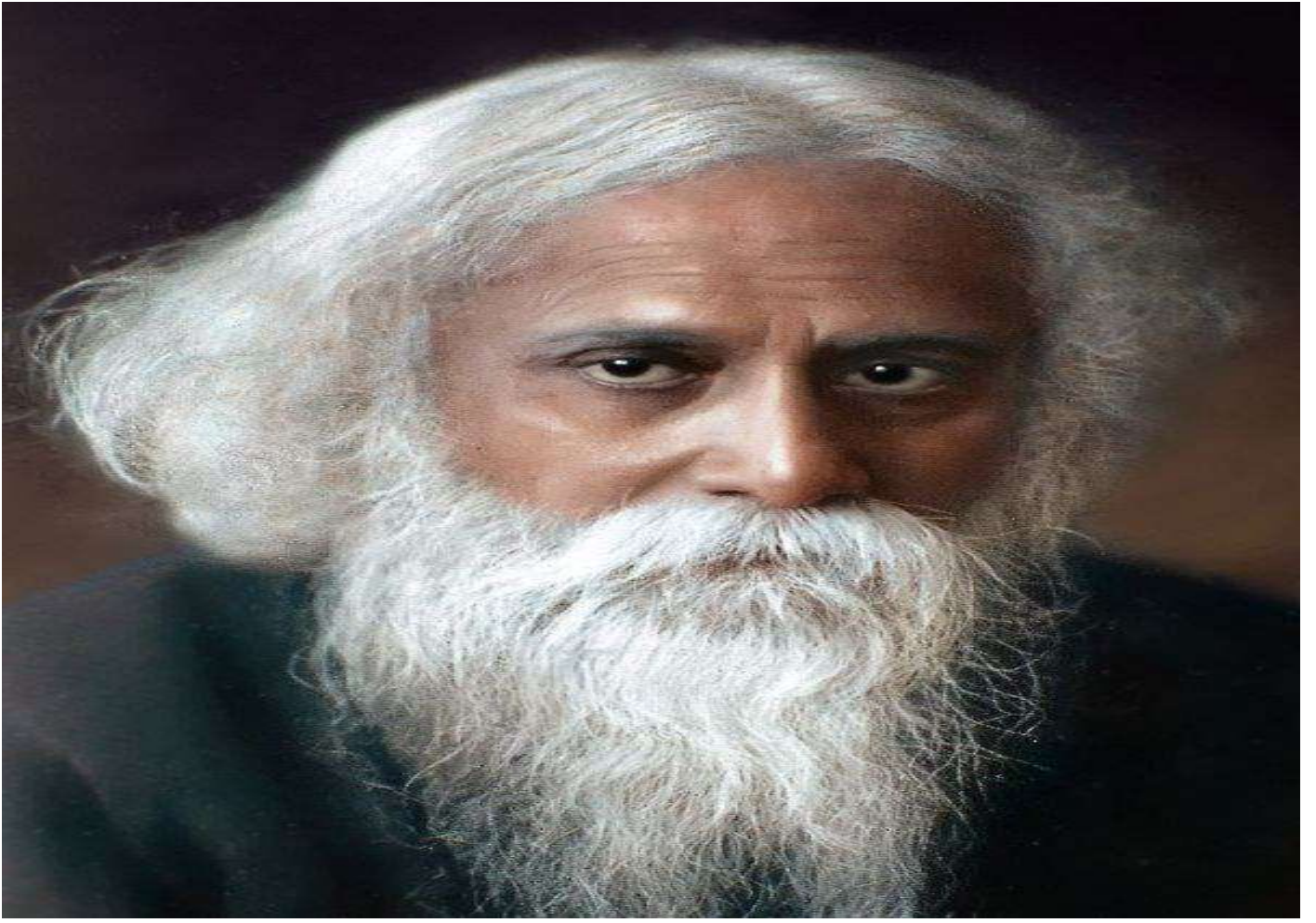
नवोदयन्स भारत ही नहीं पूरी दुनिया में बना रहे हैं अपना अलग मुकाम - पोस्टमास्टर जनरल कृष्ण कुमार यादव

बीएचयू स्थित शताब्दी कृषि भवन में जुटे नवोदयन्स, नवोदय विद्यालय स्थापना दिवस पर हुआ सम्मान

“हम नव युग की नई भारती, नई आरती/हम स्वराज्य की ऋचा नवल/भारत की नवलय हों/नव सूर्योदय, नव चंद्रोदय/हमी नवोदय हों” प्रार्थना के साथ नवोदय विद्यालय स्थापना दिवस और एल्युमिनाई मीट समारोह का आयोजन वाराणसी में बीएचयू स्थित शताब्दी कृषि भवन में किया गया। इसमें उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, राजस्थान, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, असम इत्यादि विभिन्न राज्यों के पुरातन नवोदय विद्यार्थी शामिल हुए और अनेकता में एकता की विशिष्टता को रेखांकित करते हुए स्कूली दिनों की यादों को ताजा किया। बीएचयू के कुलगीत,

नवोदय प्रार्थना, स्वागत गीत के बीच अतिथियों ने पां. मदन मोहन मालवीय और नवोदय विद्यालय के संस्थापक राजीव गांधी के चित्र पर माल्यार्पण और दीप प्रज्वलन कर कार्यक्रम का शुभारंभ किया।

कार्यक्रम का शुभारंभ करते हुए वाराणसी परिक्षेत्र के पोस्टमास्टर जनरल श्री कृष्ण कुमार यादव ने कहा कि अप्रैल, 1986 में दो नवोदय विद्यालयों से आरंभ हुआ यह सफर आज 661 तक पहुँच चुका है। देश भर में नवोदय विद्यालय के 16 लाख से अधिक पुरा विद्यार्थियों का नेटवर्क समाज को नई दिशा देने के लिए तत्पर है। आज नवोदय एक ब्रांड बन चुका है। राजनीति, प्रशासन, चिकित्सा, इंजीनियरिंग, सैन्य सेवाओं से लेकर विभिन्न प्रोफेशनल सेवाओं, बिजनेस और सामाजिक सेवाओं में नवोदयन्स पूरे भारत ही नहीं वरन पूरी दुनिया में अपना अलग मुकाम बना रहे हैं। श्री यादव ने कहा कि अमृत काल में भारत के उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करने में नवोदयन्स की अहम भूमिका है। नवोदय विद्यालय एक सरकारी संस्थान होने के बावजूद उत्कृष्ट शिक्षा और बेहतर परीक्षा परिणामों की वजह से आज शीर्ष पर है। बरेका में चीफ इंजीनियर श्री रणविजय सिंह ने



कवींद्र-रवींद्र और उनके विमर्श

भा

रतीय संस्कृति के शलाका पुरुषों में रवींद्रनाथ टैगोर का नाम प्रतिष्ठापरक रूप में अंकित है। वे एक ऐसे व्यक्तित्व थे, जो जीती-जागती किंवदंती बन गए। साहित्यकार-संगीतकार-लेखक-कवि-नाटककार-संस्कृतिकर्मी एवं भारतीय उपमहाद्वीप में साहित्य के एकमात्र नोबेल पुरस्कार विजेता के अलावा उनकी छवि एक प्रयोगधर्मी और मानवतावादी की भी है। तभी तो शब्द और संगीत के इस विलक्षण साधक के लिए पं० हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा कि -"बड़ा आदमी वह होता है जिसके संपर्क में आने वाले का अपना देवत्व जाग उठता है। रवींद्रनाथ ऐसे ही महान पुरुष थे। वे उन महापुरुषों में थे जिनकी वाणी किसी विशेष देश या संप्रदाय के लिए नहीं होती, बल्कि जो समूची मनुष्यता के

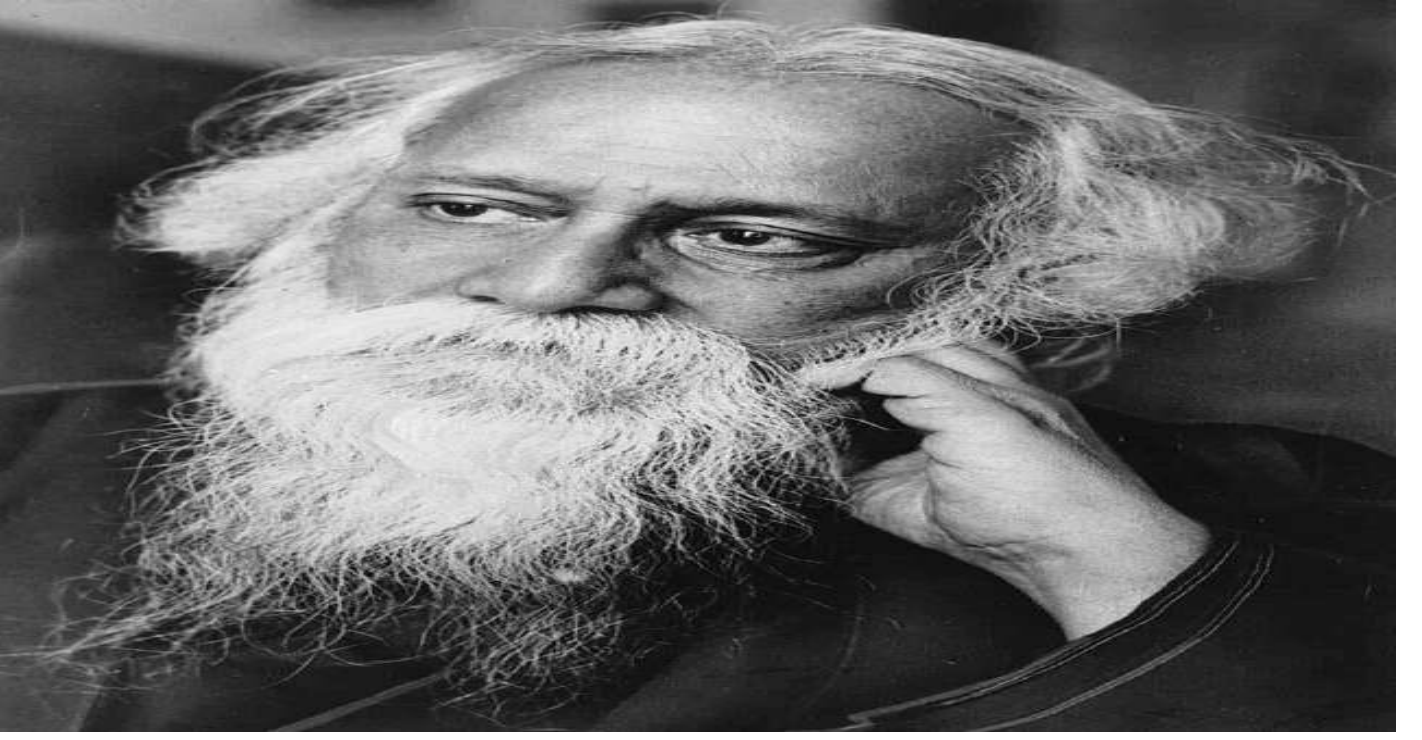
उत्कर्ष के लिए सबको मार्ग बताती हुई दीपक की भाँति जलती रहती है।" वाकई रवींद्रनाथ टैगोर को शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता। उनकी रचनाधर्मिता का क्षितिज इतना विस्तृत



संपर्क भाषा भारती, मई—2023

है कि आज भी उनकी प्रासंगिकता जस-की-तस बरकरार है। कोई भी विधा उनकी लेखनी से अछूती नहीं रही। विभिन्न विधाओं में उन्होंने 141 पुस्तकें लिखीं, जो 27 खंडों में प्रकाशित हुईं। इनमें 15 काव्य-संकलन (12, 000 कविताएं), 11 गीत-संग्रह (2000 गीत), 47 नाटक, 34 लेख-निबंध-अलोचना संग्रह, 13 उपन्यास, 12 कहानी-संग्रह, 6 यात्रा-वृत्तान्त व 3 खण्डों में आत्मकथा शामिल हैं। रवींद्रनाथ की अधिकतर काव्य-रचनाएं 'गीत-वितान' व 'संचयिता' में संग्रहित हैं। यह एक अजीब संयोग है कि सभी विधाओं में समान अधिकार रखने वाले टैगोर को नोबेल पुरस्कार उनकी काव्य-कृति 'गीतांजलि' पर मिला और आज भी साहित्य का नोबेल पुरस्कार पाने वाले वे भारतीय उपमहाद्वीप के इकलौते साहित्यकार हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर का जन्म 7 मई 1861 को बंगाल के जोरासांको में हुआ। मनीषी



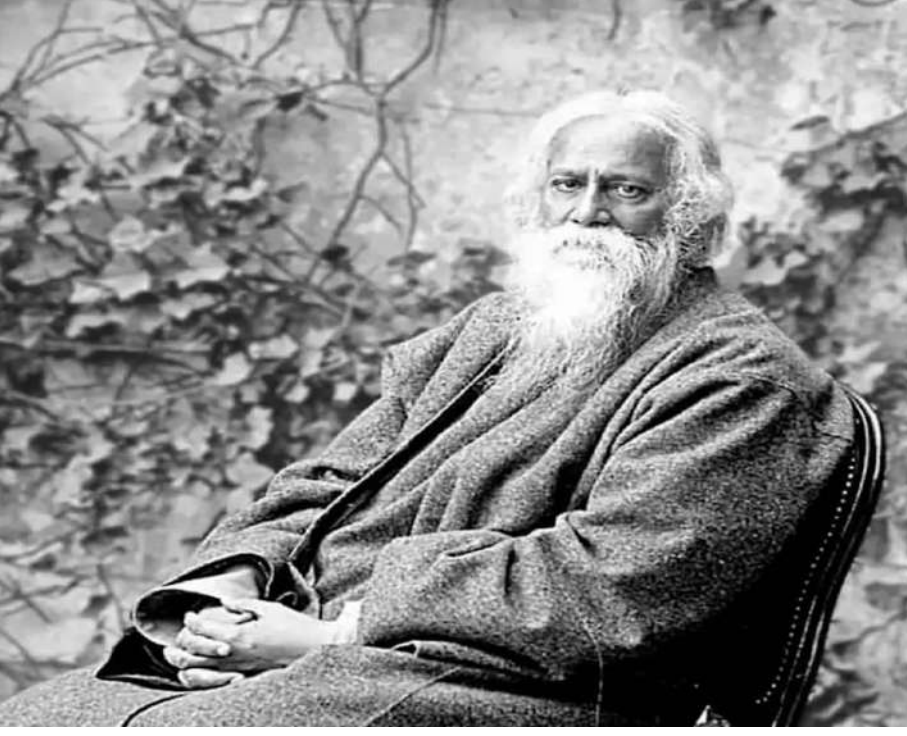
द्वारकानाथ ठाकुर और माता शारदा देवी की 14वीं संतान के रूप में रवींद्रनाथ का जन्म हुआ। रवींद्रनाथ ने एक ऐसे परिवार में जन्म लिया जहाँ परंपराएं व संस्कार थे तो आधुनिकता भी थी। भौतिकता की चकाचैंध थी तो अध्यात्म का परिवेश था, तभी तो उनकी आठवीं तक की शिक्षा घर पर ही हुई और आगे की शिक्षा के लिए वे इंग्लैण्ड भेजे गए। प्राचीन वैदिक साहित्य के साथ ही पाश्चात्य दर्शन का प्रभाव भी उनके खून में था। संगीत-कला-साहित्य की अनुगूंज वातावरण में सर्वत्र विद्यमान थी, यून ही सात वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने जीवन की पहली कविता नहीं रच डाली। स्वयं रवींद्रनाथ टैगोर ने लिखा है कि-शमेरा परिवार हिन्दू सभ्यता, मुस्लिम सभ्यता एवं ब्रिटिश सभ्यता की त्रिवेणी था।

रवींद्रनाथ टैगोर पर अपने परिवार की सामासिक संस्कृति का बचपन से ही गहरा प्रभाव पड़ा। सांवले चेहरे के बीच उनकी आँखें मानो हर पल कुछ ढूँढना चाहती थी। कुछ आत्म, कुछ परमात्म और इससे भी परे जीवन की विसंगतियों को देखकर विचलित होने का भाव। यही कारण है कि उनका विलक्षण व्यक्तित्व एकांगी नहीं बल्कि बहुआयामी रहा। एक साथ ही उन्होंने साहित्य, संगीत, चित्रकला, नाट्य, शिक्षा सभी में महारत हासिल की। रवीन्द्र सिर्फ विधाओं के ही यायावर नहीं थे बल्कि जीवन में भी यायावर थे उन्होंने 13 बार विश्व भ्रमण किया। 'रवीन्द्र-संगीत' की गणना आज भी बंगाल की

लोकप्रिय संगीत-शैलियों में होती है। रवींद्रनाथ के गीतों के अनुवाद जर्मनी, फ्रांस, जापान, इटली आदि में किए गए हैं। इटली के कुछेक चित्रकारों ने तो उनके गीतों के आधार पर चित्र रचना तक की है। तभी तो कहते हैं कि रवींद्रनाथ जितना पढ़े गए हैं, उससे कहीं ज्यादा सुने गए हैं। आज भी टैगोर की रचनाओं के पुनर्वेषण के स्वतः स्फूर्त प्रयास निरंतर चल रहे हैं। उनकी रचनाएं कल भी मनुष्य को झकझोरती थीं और आज भी झकझोर रही हैं। सत्यजीत रे जैसे दिग्गज फिल्मकार ने उनकी रचनाओं पर चारूलता, घरे बाहिरे व तीन कन्या जैसी शानदार फिल्में बनाई तो राजा, रक्तकरबी, विसर्जन, डाकघर जैसी नाट्यकृतियों का मंचन आज भी उतना ही प्रासंगिक दिखाई देता है। यहाँ तक कि अपने रंग-जीवन के अंतिम वर्षों में हबीब तनवीर जैसे विख्यात निर्देशक ने भी 'राजरक्त' नाम से टैगोर के नाटक 'विसर्जन' की मंच प्रस्तुत की और उसे आरंभिक प्रदर्शन के बाद मांजते रहे। वाकई पीढ़ियों के अंतराल के बाद भी रवींद्रनाथ टैगोर की कृतियों का मंचन-संचयन यही दर्शाता है कि उनकी कृतियों की नई व्याख्याओं की गुंजाइश सदैव बनी रहेगी और वे अपनी प्रासंगिकता कभी नहीं खोएंगी। ऐसे में जो लोग रवींद्रनाथ टैगोर की प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं, उन्हें भी रवींद्रनाथ के पक्ष में बहने वाली बयार चकित-विस्मित करती रहती है। अगर आज भी रवींद्रनाथ के गीतों-कविताओं को गायक-

गायिकाएं सजा-सँवार रहे हैं, उनके नाटक नए सिरे से खेले जा रहे हैं, 'काबुली वाला' और अन्य कहानियाँ लोगों के मर्म को छू रही हैं, 'गोरा' जैसे उपन्यास नए विमर्श और पाठ के लिए उकसाते हैं, उनका बाल-साहित्य बहुतां का मन मोहता है, उनकी कृतियों को लेकर डाक-टिकट जारी हो रहे हैं तो यह मानना पड़ेगा कि टैगोर आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं एवं वे हर समय हमारे सम्मुख नित नए रूपों में अवतरित होते रहते हैं। यहाँ टैगोर के बाल-साहित्य पर लिखे डब्ल्यू बी। यीट्स के शब्द गौर करने लायक हैं- 'वस्तुतः जब वह बच्चों के विषय में बातें करते हैं तो निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि वह संतों के विषय में भी बात नहीं कर रहे हैं।'

एक जमींदार परिवार से होते हुए भी रवींद्रनाथ उदार दृष्टि के थे। उनका कवि-मन जीवन की सहजता में विश्वास करता था। वे लोगों से घुलने-मिलने और उनकी जीवन-संस्कृति को समझने की कोशिश करते थे। फिर वह चाहे मुंडा आदिवासियों के मध्य रहकर उनकी संस्कृति को समझना हो, ग्राम हितैषी सभा के माध्यम से गाँवों में स्कूल, अस्पताल आदि की स्थापना हो, ग्राम संसद के तहत पंचायती राज को मूर्त रूप देना हो या नोबेल पुरस्कार में प्राप्त धन को शांतिनिकेतन को दान देकर उससे भारत के प्रथम कृषि बैंक की स्थापना हो। रवींद्रनाथ एक भविष्यदृष्टा थे। रवींद्रनाथ ने नारी-सशक्तीकरण, नारी शिक्षा, विधवा विवाह, दहेज प्रथा, बाल-विवाह, देवदासी इत्यादि



को लेकर प्रखरता से कलम चलाई रक्तकरबी, गोरा, श्यामा, चंडालिका, चोखेर-बाली, पुजारिनी, घरे बाइरे इत्यादि उनकी चर्चित रचनाओं को इसी क्रम में देखा जा सकता है। टैगोर की संवेदनाएं सिर्फ साहित्य-कला-संगीत तक ही सीमित नहीं थीं, वे उसे वास्तविकता के धरातल पर देखना चाहते थे। इसी कारण मानवीय गरिमा और सम्मान के कवि रूप में वह सकल विश्व में विख्यात हैं। विज्ञान में वे विश्वास करते थे पर नैतिकता की कीमत पर नहीं।

रवींद्रनाथ टैगोर का स्वतंत्रता-आंदोलन में भी अप्रतिम योगदान रहा। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में वे प्राध्यापक रहे, अंग्रेजियत के ताने-बाने को काफी नजदीक से महसूस किया पर देश-प्रेम की उत्कट अभिलाषा उनके अंदर व्याप्त थी। जहाँ कांग्रेस के नेता व अन्य भाषणों द्वारा लोगों में देशभक्ति की भावना को उभार रहे थे, वहीं उनके क्रांतिधर्मी गीत लोगों की रगों में आजादी का जोश भर देते थे। उन्होंने गीत के माध्यम से आह्वान किया था-“जोदी तोर डाक शुने केउ ना आशे, तबे ऐकला चलो रे।” 1905 के ‘बंग-भंग’ आंदोलन के दौरान हिन्दू-मुसलमानों द्वारा एक दूजे को राखी बाँधकर एकता का प्रदर्शन उनकी ही सोच थी। वे एक साथ ही क्रांतिकारी थे और उदारवादी भी। जलियांवाला बाग हत्याकांड के विरोध में नाइट हुड के तौर पर दी गई ‘सर’ उपाधि को लौटाने में उन्होंने कोई देरी न दिखाई। सरदार

भगत सिंह जैसे क्रांतिकारी भी टैगोर की रचनाओं से प्रेरणा पाते थे। भगत सिंह ने अपनी जेल डायरी में टैगोर का एक लेख ‘पूँजीवाद और उपभोक्तावाद’ अपने हाथों से लिख रखा था। यही नहीं टैगोर की इस उक्ति को भी भगत सिंह ने दर्ज किया था कि “जो न्यायधीश अपनी तजवीज की हुई सजा के दर्द को नहीं जानता, उसे सजा देने का हक नहीं।” यह अनायास ही नहीं था कि काकोरी कांड में सजा काट रहे रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खां, रोशन लाल इत्यादि क्रांतिकारी ‘सरफरोशी की तमन्ना’ के साथ-साथ रवींद्रनाथ टैगोर व काजी नजरूल इस्लाम के क्रांतिधर्मी गीतों को गाकर वातावरण में देश-भक्ति का उन्माद फैलाते रहते। इतिहास गवाह है कि रवींद्रनाथ टैगोर ने बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय द्वारा रचित राष्ट्र-गीत ‘वन्दे मातरम’ की धुन तैयार की और स्वयं 1896 के कांग्रेस अधिवेशन में इसे पहली बार गाया। राष्ट्रगान ‘जन-गण-मन’ के रचयिता भी टैगोर ही हैं। टैगोर को यह सौभाग्य प्राप्त है कि वे भारत और बांग्लादेश दो राष्ट्रों के राष्ट्रगान के रचयिता हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर की मातृभाषा बांग्ला थी, पर हिन्दी साहित्य से भी उनका लगाव था। किशोर-वय से ही वे वाल्मीकि-कालिदास समेत भारतीय काव्यधारा की विशद परंपरा के साथ-साथ जयदेव, विद्यापति, कबीर और नानक की परंपरा से

जुड़े। अपने समकालीन तमाम हिन्दी-साहित्यकारों से भी टैगोर का संपर्क बना रहा। वे खुद कहते थे कि-“मैं हिन्दी भाषी लोगों के निकट संपर्क में आने हेतु बेहद उत्सुक हूँ। यहाँ हम लोग संस्कृति-साहित्य प्रचार के लिए जो भी कुछ कर सकते हैं, कर रहे हैं। हमारी दिली इच्छा है कि हिन्दी भाषी लोग भी यहाँ आएँ, हमारे अनुभव में हिस्सा बटाएँ तथा अपने अनुभव से हमें भी लाभान्वित करें।” आचार्य क्षितिमोहन सेन, पां हजारी प्रसाद द्विवेदी जैसे साहित्यकारों से उनका निरंतर संपर्क रहा और इनके माध्यम से उन्होंने हिन्दी साहित्य के मर्म को समझा। अज्ञेय व टैगोर की मुलाकात पां हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ही कराई थी। आचार्य क्षितिमोहन सेन, पां हजारी प्रसाद द्विवेदी, अज्ञेय के साथ-साथ वे माखनलाल चतुर्वेदी व जैनेन्द्र से भी मुलाकात किए। टैगोर हिन्दी गद्य को समझने के लिए प्रेमचंद से मिलने को काफी उत्सुक थे, पर दोनों के मिलन का कोई संयोग अंत तक नहीं बन सका। इसे साहित्य की एक विडम्बना के रूप में ही माना जाएगा। उनकी दिली इच्छा थी कि साहित्य की भाषा कुछ भी हो, पर यदि वह लोगों की संवेदनाओं को झंकृत करता है तो अन्य भाषाओं में भी उसका अनुवाद होना चाहिए, ताकि लोग उससे लाभान्वित हो सकें। रवींद्रनाथ ने स्वयं कबीर, मीरा विद्यापति का बांग्ला में अनुवाद किया। कबीर की वाणी से तो वे इतने प्रभावित हुए कि उनकी रचनाओं का ‘हंड्रेड पोएम्स ऑफ कबीर’ शीर्षक से अंग्रेजी अनुवाद भी किया।

साहित्य की विभिन्न विधाओं में हिन्दी की गौरवमयी परंपरा को टैगोर समग्र देश ही नहीं विश्व के सामने भी लाना चाहते थे। एक तरफ वे कबीर-वाणी को अंग्रेजी में अनुदित करते हैं तो दूसरी तरफ उन्हें बघेलखंड के कवि ज्ञानदास के पद भी प्रभावित करते हैं। टैगोर ने स्वयं लिखा कि-“ज्ञानदास की रचनाएं सुनकर मुझे अनुभव हुआ कि आजकल की आधुनिक कविता का परिचय इनकी कविताओं में मिलता है और ये कविताएं सर्वदा के लिए आधुनिक ही हैं।” गीत-विधा पर टैगोर की जबरदस्त पकड़ थी। वे अन्य भाषाओं में रचित गीतों की संजीदगी से प्रभावित भी होते थे। हिन्दी साहित्य में गीतों की परंपरा पर उनका कथन उद्धृत करना उचित होगा-“इसमें कोई संशय नहीं है कि एक समय हिन्दी भाषा में गीत साहित्य का आविर्भाव



हुआ है, उसके गले में अमरसभा का वारमल्य है।“ पर इसके साथ ही वे सचेत भी करते हैं कि “आज वह अनादर के कारण बहुत कुछ ढका हुआ है। इसका उद्धार अति-आवश्यक है, जिससे भारतवर्ष के अ-हिन्दी लोग भी भारत के इस चिरंतन साहित्य के उत्तराधिकार के गौरव के भागीदार हों।“ साहित्य की जीवंतता के लिए उसमें प्रवाह व सहजता का होना बेहद जरूरी है। यदि साहित्य में लचीलापन न हो तो उसके चटकने में देरी नहीं लगती। इसी प्रकार अलंकारों से परिपूर्ण साहित्य वर्ग-विशेष तक ही सीमित रह जाता है, जन-सरोकारों से वह कट जाता है। रवींद्रनाथ टैगोर भी साहित्य में अलंकारों की इस कृत्रिमता के पक्षधर नहीं थे। एक बार उन्होंने बिहारी की रचनाओं के बारे में कहा कि-“कुछ भी क्यों न हो, बिहारी सतसई जैसे ग्रंथ मेरे लिए रुचिकर सिद्ध नहीं हुए, विशेषकर किसी-किसी दोहे के चार-चार, पाँच-पाँच अर्थों के विषय में वाद-विवाह मुझे कुछ जंचा नहीं।“ वस्तुतः टैगोर कवित्व को साधना रूप में देखते थे। वह कहते थे कि मैं गीत गाने वाली चिड़िया जैसा हूँ, मेरा गीत कहीं बाहर नहीं बल्कि पत्तों के परदे में है, जहाँ बैठकर चिड़िया अनायास ही गाने लगती है। वे मानवतावादी विचारधारा के प्रबल पोषक थे। हिन्दी साहित्य के छायावाद युग पर टैगोर का

प्रभाव देखा जा सकता है। स्वयं महादेवी वर्मा ने अपने ग्रंथ ‘पथ के साथी’ में टैगोर को स्मरण करते हुए उनके प्रति अपने उद्गार व्यक्त किए हैं।

रवींद्रनाथ टैगोर (7 मई 1861-8 अगस्त 1941) की प्रतिभा किसी देश-काल की मोहताज नहीं थी। उन्होंने भारतीय साहित्य की समृद्ध परंपरा को इसकी उँचाईयों तक पहुँचाया और अंग्रेजी भारत में रहते हुए भी साहित्य का प्रतिष्ठित नोबेल पुरस्कार प्राप्त कर न सिर्फ स्वतंत्र-चेतना का उद्गार किया बल्कि पराधीन भारत के आहत स्वाभिमान को एक बार फिर गर्व से अपना सिर उठाने का अवसर दिया। यह सोचने वाली बात है कि अगर बीसवीं शताब्दी के शुरू में बांग्ला जैसी प्रांतीय भाषा में एक ऐसा विश्वस्तरीय साहित्यकार हो सकता था जिसने साहित्य का सर्वोच्च सम्मान अर्जित कर नए प्रतिमान गढ़े हों, तो यह भारत की भाषिक बहुलता और भारतीय भाषाओं की जीवंत ऊर्जा को रेखांकित करता है। एक तरफ वे प्रकृति और उसके रहस्य का गीत गाते हैं तो वहीं उनके साहित्य में मानव जीवन की बुनियादी चिंतायें भी हैं। अनेक मामलों में उनकी समझ अपने युग के सभी विचारकों, आलोचकों, रचनाकारों और कला मनीषियों के विचारों

की सीमाओं को भेदती हुई मनुष्यत्व के मर्म तक गयी है। धर्म, शिक्षा, राष्ट्र, अध्यात्म, मानवतावाद, सार्वभौम मनुष्य इत्यादि को लेकर उनके विचारों की आज देश-दुनिया में विशेष प्रासंगिकता है और बदलते परिप्रेक्ष्य में भी उन पर व्यापक पुनर्विचार और उसके प्रचार की आवश्यकता है। यदि टैगोर को नोबेल पुरस्कार मिलने के एक सदी के पश्चात भी भारतीय उपमहाद्वीप में किसी साहित्यकार को यह खिताब नहीं मिला तो यह स्वयं में टैगोर की प्रासंगिकता को कायम रखती है।

लेखक : कृष्ण कुमार यादव, भारतीय प्रशासनिक सेवा से हैं और वर्तमान में भारतीय डाक सेवा, में पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी परिक्षेत्र, हैं। मो।- 09413666599 ई-मेल: kkyadav1t@gmailcom

कोष्ठक शुरू करना बंद करना : सही (7 मई 1861-8 अगस्त 1941) गलत : (7 मई 1861-8 अगस्त 1941) (कोष्ठक दे कर न शुरू करें, न ही बंद करने से पहले स्पेस दें के बाद स्पेस न



शर्मिंदगी झेलने को मजबूर आधी आबादी

सोनम लववंशी

सा

ल 2017 में
अक्षय कुमार

अभिनीत एक फ़िल्म आई थी- टॉयलेट एक प्रेम कथा। इस फ़िल्म की कहानी ग्रामीण इलाकों में स्वच्छता के महत्व जैसे गंभीर मुद्दे पर प्रकाश डालती है, लेकिन आज़ादी के अमृत काल में भी अगर आधी आबादी को खुले में शौच के लिए जाना पड़े। फिर अमृत काल और सरकारी तंत्र पर सवालिया निशान खड़े होना लाज़िमी है। स्वच्छ भारत अभियान को शुरू हुए एक लंबा अरसा बीत गया है। इसके बावजूद आज़ादी के अमृत काल में 26 प्रतिशत अदालती परिसरों में महिलाओं के लिए टॉयलेट उपलब्ध नहीं है। जो यह सोचने पर मजबूर कर रहा है कि अगर अदालत परिसरों का यह हाल है तो फिर अन्य जगहों के हालात कैसे होंगे? टॉयलेट जैसी मूलभूत सुविधाएं एक सभ्य और संभ्रांत समाज की

आवश्यकता है। ऐसे में सिर्फ़ स्वच्छ भारत अभियान का ढिंढोरा पीटने से हमारी



जिम्मेदारी पूर्ण नहीं होगी। महिलाओं को

टॉयलेट जैसी सुविधाएं मयस्सर करवाना समाज और सरकार की जिम्मेदारी में शामिल होना चाहिए।

आज हम देश के विकास में नित नए कसीदे पढ़ रहे हैं। जबकि हमारे ही देश की आधी आबादी आज भी खुले में शौच करने को मजबूर है। वैसे तो वर्तमान सरकार शौचालयों के निर्माण में अरबों- करोड़ों रुपये खर्च होने का दम्भ भी भरती है, लेकिन जब कोई रिपोर्ट आती है। फिर सच्चाई से सामना समाज और सरकार का होता है। आधुनिक भारत में भी महिलाएं शौचालय के लिए संघर्ष करने को मजबूर है, तो यह दुःखद स्थिति बयां करती है। आखिर क्या वजह है जो वर्तमान समय में भी हमारे देश में सभी के लिए शौचालय उपलब्ध नहीं है। स्वच्छता तो मानव जीवन में बहुत जरूरी है और महिलाओं को विशेषकर घर की इज्जत से जोड़कर देखा जाता है। फिर उन्हें शौच के लिए बाहर भेजने में आखिर क्या समझदारी कही जा सकती है? शौच जो हमारी



दैनिक दिनचर्या का अहम हिस्सा है, लेकिन वर्तमान समय में दुनिया की एक बड़ी आबादी के पास स्वच्छता और उससे जुड़ी बुनियादी सुविधाओं का अभाव है। पूरी दुनिया के लगभग 316 बिलियन लोगों के लिए शौचालय तक पहुंच आज भी नामुमकिन है। यहां तक कि सतत विकास लक्ष्य में भी साफ पानी और स्वच्छता की बात कही गई है और साल 2030 तक इस लक्ष्य को पूरा करने का प्रयास भी किया जा रहा है। लेकिन अभी भी पर्याप्त जागरूकता की कमी साफ नज़र आ रही है। यही वजह है कि महिलाएं अदालत परिसरों में भी शौचालय की सुविधाओं से वंचित रह जाती हैं।

इतना ही नहीं शौचालय हर परिवार की बुनियादी जरूरत है, लेकिन विडंबना देखिए टॉयलेट एक प्रेम कथा जैसी फ़िल्म के आने के पांच-छह साल बाद भी इसे लेकर ग्रामीणों क्षेत्रों में जागरूकता का अभाव है। गांवों में अब तक शौच के लिए बाहर जाने को स्वास्थ्य के लिए बेहतर माना जाता है। यही वजह है कि देश शौचालयों की कमी से जूझ रहा है। सरकार द्वारा स्वच्छ भारत मिशन जैसी योजनाओं के द्वारा जागरूकता लाने की तमाम कोशिशों के बावजूद लक्ष्य हासिल करने में लंबा वक्त लग

रहा है। वैसे तो खुले में शौच करने में सभी को परेशानी होती है लेकिन महिलाओं को ज्यादा दिक्कतों का सामना करना पड़ता है। लोक-

इतना ही नहीं शौचालय हर परिवार की बुनियादी जरूरत है, लेकिन विडंबना देखिए टॉयलेट एक प्रेम कथा जैसी फ़िल्म के आने के पांच-छह साल बाद भी इसे लेकर ग्रामीणों क्षेत्रों में जागरूकता का अभाव है। गांवों में अब तक शौच के लिए बाहर जाने को स्वास्थ्य के लिए बेहतर माना जाता है।

लज्जा के साथ ही सुरक्षा का खतरा भी बना रहता है। यही वजह है कि अब महिलाएं भी इस मुद्दे पर अपनी आवाज़ बुलंद कर रही हैं। बीते दिनों खुले में शौच के दौरान बलात्कार

की घटना के बाद राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने कहा कि यदि देश में शौचालय होंगे तो बलात्कार जैसी घटनाओं पर अंकुश लगेगा। ये सच है कि शौच के लिए महिलाओं को रात के अंधेरे में घर से बाहर जाना पड़ता है। ऐसी स्थिति में सुरक्षा का खतरा बना रहता है। कई बार देखा गया है कि ग्रामीण क्षेत्रों में शौच के लिए गयी लड़कियां बलात्कार का शिकार हो गईं और यही वजह है कि पिछले कुछ सालों में शौचालय को लेकर महिलाओं ने घर परिवार से लेकर सरकारी सिस्टम तक लंबी लड़ाई लड़ी है। यहां तक कि कई बार तो महिलाओं ने अपने ससुराल तक आने से मना कर दिया। जब तक घर में शौचालय नहीं होगा तब तक ससुराल नहीं जाएंगी। ये कहानियां भी सोशल मीडिया पर देखने और सुनने को मिलीं।

प्रधानमंत्री मोदी ने साल 2019 में ही भारत को 'खुले में शौच मुक्त' घोषित कर दिया था। खुले में शौच मुक्त का सीधा सा मतलब है कि अब हमारे देश में लोग खुले में मल त्याग नहीं करेंगे। लेकिन अब भी न केवल ग्रामीण क्षेत्रों में बल्कि शहरी आबादी में भी लोग खुले में शौच करते देखे जा सकते हैं। खासकर सड़कों व रेल की पटरियों के किनारे, खेतों में यहां

तक कि घर के बाहर खुले में लोग मल त्याग करते हैं। जो स्वच्छ भारत मिशन पर सवाल तो खड़े करता है। साथ ही सरकार और समाज की सोच पर भी करारा प्रहार करता है। एनएसएसओ की एक रिपोर्ट कि माने तो भारत के 7113 प्रतिशत घरों में ही अब तक शौचालय बन पाए हैं। ऐसे में सोचने वाली बात है कि जब शौचालय ही 100 प्रतिशत घरों में नहीं बने तो भारत पूरी तरह खुले में शौच से मुक्त कैसे हो गया? वैसे सवाल यह भी है कि क्या शौचालय का इस्तेमाल करने वाले गंदगी नहीं फैला रहे? सच तो यह है कि पर्याप्त सुविधाओं के अभाव के चलते 'खुले में शौच मुक्त' होना भी एक नयी समस्या को जन्म दे रहा है।

बात अगर प्रसिद्ध नारीवादी चिंतक एवं लेखक सिमोन द बोउवर कि करे तो उनका मानना था कि- "नारी पैदा नहीं होती बल्कि उसे नारी बना दिया जाता है"। हमारे देश की कुल आबादी में लगभग आधी हिस्सेदारी महिलाओं की है जो आज भी राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक रूप से वंचित और उपेक्षित है। देश को आजाद हुए सात दशक से अधिक होने को है। फिर भी महिलाओं को पर्याप्त हिस्सेदारी नहीं मिली है। आज भी महिलाओं को पितृसत्तात्मक समाज अपने पैरों की जूती ही समझता है तभी तो महिलाओं की परेशानी पुरुष प्रधान समाज को नज़र नहीं आती है। खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में तो महिलाओं की स्थिति और भी ज्यादा दयनीय है।

आज भी अपनी छोटी छोटी आवश्यकताओं के लिए पुरुषों पर ही निर्भर रहना ही महिलाओं की नियति बन चुकी है। महिलाओं की अपनी पीड़ा और अपना दर्द है जिसे मर्दवादी समाज दरकिनार कर देता है। फिर बात चाहे मासिक धर्म की हो या फिर खुले में शौच की? उसे अपनी पीड़ा स्वयं झेलना होता है। आज भी सार्वजनिक क्षेत्रों, मार्केटों में महिलाओं के लिए अलग टॉयलेट आसानी से उपलब्ध नहीं होते हैं। जो यह दर्शाता है कि महिलाओं की नियति में संघर्ष हर क्रम पर है।

केंद्र सरकार की प्रमुख योजना स्वच्छ भारत अभियान के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय, विशेषकर जिला न्यायालयों में टॉयलेट (शौचालय) के नवीनीकरण और मरम्मत करने के लिए स्वच्छ न्यायालय परियोजना लॉन्च

की गई थी। इस परियोजना को सभी 16, 000 अदालत परिसरों में स्थित टॉयलेट को छह महीनों के अंदर बेहतर स्थिति में करने के लिए लॉन्च किया गया था। लेकिन दिल्ली में न्यायिक सुधार पर काम करने वाली स्वायत्त संस्था 'विधि' की सर्वे रिपोर्ट जिला अदालतों में महिलाओं के लिए शौचालयों की स्थिति पर गंभीर सवाल खड़े कर रही है। इस सर्वेक्षण में अदालत परिसरों में स्थित टॉयलेट की दयनीय स्थिति का खुलासा हुआ है। रिपोर्ट के अनुसार देश की 665 जिला अदालतों में से करीब 100 जिला अदालतें ऐसी हैं, जिनमें महिलाओं के लिए टॉयलेट की सुविधा उपलब्ध नहीं है। आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, जम्मू एवं कश्मीर, झारखंड, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, मणिपुर, नगालैंड, ओडिशा, पंजाब, पुडुचेरी, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड और पश्चिम बंगाल ऐसे राज्य हैं जिसके कई जिलों में तो अदालत परिसरों में महिलाओं के लिए टॉयलेट ही नहीं हैं। इस रिपोर्ट में कहा गया कि, "आंध्र प्रदेश में 69 प्रतिशत अदालत परिसरों में महिलाओं के लिए टॉयलेट नहीं हैं। ओडिशा में 60 प्रतिशत और असम में 59 प्रतिशत अदालत परिसरों में यही स्थिति है।" गोवा, झारखंड, उत्तर प्रदेश और मिजोरम ऐसे राज्य हैं जहां सबसे कम अदालत परिसरों में टॉयलेट हैं।

अब आप सोच सकते हैं कि यहां महिलाएं कैसे काम करती होंगी या रोजाना उन्हें कितना संघर्ष करना पड़ता होगा? सर्वे रिपोर्ट में बताया गया है कि आधे से ज्यादा जिला अदालतों में सुविधाओं का अभाव है। अब सवाल ये उठता है कि सरकार कोर्ट परिसर को अपडेट करने के लिए करीब 7000 करोड़ रुपये खर्च कर रही है। आखिर वो पैसे कहां खर्च किए जा रहे हैं? सर्वे के मुताबिक देश में सिर्फ 40 फीसदी जिला अदालतें ऐसी हैं, जहां पूरी तरह सर्वसुविधायुक्त महिला शौचालय मौजूद हैं। सर्वे के अनुसार देश की 100 जिला अदालतों में महिलाओं के अलग से शौचालय की सुविधा तो बिल्कुल भी नहीं है। जिला अदालतों की ऐसी स्थिति निश्चित तौर पर चिंताजनक है। महिलाओं के लिए तत्पर दिखने का दावा करने वाली सरकार इसे कितनी गंभीरता से लेती है। ऐसे में अब ये देखने वाली बात होगी?



काहे मारी स्याम कांकरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

मैं तो पनिया भरन को आई
काहे छेड़े नार पराई
काहे सिर से उतारी चुनरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

काहे मारी स्याम कांकरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

छोड़ो छोड़ो डगरिया हमारी
झकझोरो ना बहिया हमारी
काहे धर के मरोरी कलैया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

काहे मारी स्याम कांकरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

गलियन में नाम धरावै
तोहे एक लाज नहीं आवै
हँस हँस के चलाये नजरिया
मेरी फूट गयी नई नई गगरिया

काहे मारी स्याम कांकरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

काहे पीछे पीछे डोलै
प्यारी प्यारी का बोलै
मन लूट लिया बीच बजरिया
मेरी फूट गयी नई नई गगरिया

काहे मारी स्याम कांकरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

सखियों के प्रिय सावरिया
तेरी बैरिन ये बाँसुरिया
मोहे कर के ना जाए बाबरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

काहे मारी स्याम कांकरिया
मेरी फूट गई नई नई गगरिया

तृप्ति मिश्रा



समय की आवश्यकता है संयुक्त परिवार

गोवर्धन दास बिन्नाणी

हमारे कृषि प्रधान देश में संयुक्त परिवार रामायण व महाभारत काल से चली आ रही प्राचीन परम्पराओं व स्थापित आदर्शों के हिसाब से चल रहे हैं। लेकिन पिछले कुछ सालों में संयुक्त परिवार से निकल लोग एकल परिवार की तरफ आकृष्ट हो रहे हैं।

आज कोरोना के इस संक्रमण काल में यह सभी को समझ में आ गया है कि घर सबसे ज्यादा सुरक्षित स्थान है हालाँकि हमारे पूर्वज तो हमेशा से ही न केवल इसे यानि घर बल्कि संयुक्त परिवार के बारे में समझाते रहे हैं। लेकिन इन बीते चालीस वर्षों में यह देखने में आ रहा है कि कई लोग अपने स्वार्थ और धनलोलुपता की वजह से कहिये या पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित हो अपना संयुक्त परिवार छोड़ एकल परिवार वाला सिद्धांत को अपना लेते हैं। वे यह कदम बिना दूर की सोचे उठा तो लेते हैं लेकिन अब जब इस संक्रमण काल में एकल परिवार का एक भी सदस्य रोग ग्रसित होता है तब उन्हें पुनः अपने दादा, दादी, नाना, नानी वगैरह द्वारा समझाई गयी बात को याद कर सोचते हैं

कि उन लोगों ने हमें ठीक ही संयुक्त परिवार के बारे में समझाया था कि मिल जुलकर रहेंगे तो न केवल हर दुःख हो या खुशी मिल बाँटेंगे यानि आवश्यकता पड़ने पर हमें किसी भी प्रकार के बाहरी मदद पर निर्भर रहना नहीं पड़ेगा।

अब मैं इस कॉलम के प्रबुद्ध पाठकों को अपनी उम्र के इस पड़ाव पर एकल परिवार व संयुक्त परिवार से सम्बन्धित जो अनुभव मेरे ध्यान में हैं वह सांझा करना चाहूँगा ताकि वे समय रहते स्वयं सही निर्णय ले सकें।

सबसे पहले अपने परिवार का ही उदाहरण देकर मैं यह बताना चाहता हूँ कि हम सभी भाई संयुक्त होते हुए भी अलग अलग शहरों में रहते हैं जिसका एक मात्र कारण व्यवसाय है। जबकि किसी भी तरह की नयी जगह में प्रवेश का मामला हो या किसी भी सदस्य की मृत्यु या फिर शादी विवाह हो या मायरा, जिसे भात भरना भी कहते हैं, के अलावा भी हर तरह का बड़ा सामूहिक पारिवारिक आयोजन, पर हम सभी भी सपत्निक इकट्ठे ही नहीं होते हैं बल्कि निर्णय भी सर्वसम्मति से ले, क्रियान्वयन कर अपनी सहभागिता निभाते हैं यानि सुख और दुःख के समय आराम से सारे काम आसानी से निपट

जाते हैं जिससे किसी को कोई भी काम भारी नहीं लगता।

अब एक दूसरा उदाहरण जो इस बार संक्रमण काल में आप सभी ने भी अनुभव किया होगा कि सब जगहों से श्रमिक बिना समय गवायें, कार्यस्थल छोड़, आनन फानन में अपने अपने गावों की तरफ सारी तकलीफें झेलते हुए भी पहुँचें और उनके संयुक्त परिवार के सदस्यों ने न केवल राहत की साँस ली बल्कि उनका तहेदिल से स्वागत ही नहीं किया बल्कि जब तक वे घर में रहे उनसभी की पूरी पूरी देखभाल भी की। और ये लोग भी गांव पहुँच परिवार के काम में बिना समय गँवाये अपना हाथ बंटाना शुरू कर दिया। इसी तरह श्रमिकों के अलावा कुछ ऐसे भी थे जो संयुक्त परिवार से कट कर रह रहे थे जिसके चलते मजबूरन उन्हें वहीं कार्यस्थल वाली जगह पर ही रुकना पड़ा और इसी बीच यदि कोई एक सदस्य भी संक्रमित या बीमार हुआ तो उस पर तो दुःखों का पहाड़ ही टूट पड़ा क्योंकि सब कुछ यानि दवा हो या भोजन सब व्यवस्था एक पर ही आ पड़ती है। ऐसे लोगों को इसके अलावा भी अनेकों तरह की अन्य तकलीफों से भी रूबरू होना पड़ा है। अब एक खास तथ्य यह है कि इस बार, विशेषकर कोरोना पीड़ितों

वाले एकल परिवारों को तो यह भी आभास हो गया कि पैसा के आगे संयुक्त परिवार बहुत मायने रखता है।

इस तरह लिखने को तो बहुत कुछ लिखा जा सकता है और आपको इस विषय पर पढ़ने को भी बहुत कुछ मिल ही जायेगा लेकिन मैंने उपरोक्त वर्णित सशक्त उदाहरणों से आप सभी के सामने एकल परिवार व संयुक्त परिवार की एक ऐसी तश्चिर पेश करने की पूरी पूरी चेष्टा की है जिससे वर्णित लाभ-नुकसान वाले तथ्य भी अपने आप ही आपके दिमाग में आने लगेंगे। फिर भी आज के समय यानि आर्थिक युग को ध्यान में रख, पाठकों की सुविधा के लिये कुछ ब्यापक मुख्य बिन्दु जैसे अनुभव, आत्मनिर्भरता, मदद, एकता, साँझा, सामाजिक सुरक्षा, मनोवाज्ञानिक मजबूती, काम प्रतिबंध, जल्द निर्णय, कम खर्च, अधिक गोपनीयता, संचय, विनिवेश, त्यौहार वगैरह पर लाभ - नुकसान अवश्य सोच लें तो निर्णय लेने में सुविधा होगी।

अन्त में मेरा निष्कर्ष तो यही है कि संयुक्त परिवार की नींव में सहिष्णुता और निस्वार्थ भाव से आपसी सहयोग मुख्य बिन्दु हैं जिसका तात्पर्य यही है कि अगर मिलजुल कर रहेंगे तो आसानी से हर एक समस्या पर आपसी रजामंदी से समय रहते ही निजात पा सकते हैं। उपरोक्त वर्णित सारे तथ्यों को कवि लक्ष्मण धामी 'मुसाफिर' ने अपनी इन दो पंक्तियों "एकाकी जीवन सदा, बैठा दुख की छाँव। पड़ जाते परिवार में, बरबस सुख के पाँवा।" के माध्यम से हम सभी को स्पष्ट सन्देश दे सचेत किया है। इसके अलावा मेरे अनुभव अनुसार संयुक्त परिवार में समय समय पर अनेक स्थापित मापदंडों में भी रजामंदी से सर्वमान्य बदलाव अपनाये गए हैं। इस तथ्य को आप सभी के ध्यान में लाने यानि बतलाने का एकमात्र तात्पर्य यही है कि अभी भी, आज के परिवेश को ध्यान में रख रजामंदी से सर्वमान्य बदलाव की पूरी पूरी गुंजाईश है। अतः हमें हमेशा ही परिवार में मिलजुल कर रहने की कोशिश करना चाहिए ताकि हम आपस में खुशी-खुशी जीवन जी सकें। इसलिये संयुक्त परिवार का हिस्सा बनें क्योंकि जब परिवार में एकजुटता रहेगी तभी एक मजबूत समाज निर्माण हो पायेगा जो आज के समय की आवश्यकता है।

1. जब औरतें बोलती है
विरोध के स्वर
तो अच्छा लगता है।

और अच्छा लगता है
जब वह घर परिवार और
रिश्ते नाते छोड़ अपने-अपने
कर्तव्यों और अधिकारों की करती हैं बाता।

बहुत अच्छा लगता है
जब वह नेताओं पर गालियां
फेंककर मारती है तमाचा
मांगती है वह अपने
वोटों का हिसाब
खोजती हैं फाइलें काम की।

2. जो भी बोलेगा खिलाफ
मार दिया जाएगा
जान से बिना किसी परवाह के।

सरकार की फाइलें
सच नहीं होती
और झूठ नहीं होते विद्रोही
उनके भीतर जलती है कहीं आग
आग लगाने के लिए
और यह बहुत ही जरूरी है
जमाने के लिए।

प्रदर्शनकारियों
का कोई रंग नहीं होता
न कोई धर्म जाति
सिर्फ उनके पास होती है एकता
और एकता में होती है बला।

3. जब जब भी
मुझे मारा गया है
जातिगत मामले के तहत
कभी नहीं आया सही निर्णय
उसे रख दिया जाता है रैगिंग के रैंक मे

संस्था अपने आप को बचाती फिरती है
कागजातों में
वह नहीं चाहती आवाजें
क्योंकि आवाजें परिवर्तन चाहती हैं।

लेकिन कब तक छुपाया जाएगा
बचाया जाएगा अत्याचार को शिष्टाचार से
कभी तो खत्म होंगे अधिकारियों के
कलम के स्याही
और उन्हें भी समय मिलेगा सोचने का सचा
आलोक रंजन



जरा बता दो मुझे

जिस्म से उतारकर जिस्म
ये जो ले जा रहे हो
जरा बता दो मुझे
प्यार की आड़ में
ये जो कच्चा माँस निगल रहे हो
जरा बता दो मुझे

देवी-देवी कहकर
ये जो काट रहे हो जुबां
खामोश कर रहे हो कब से
जरा बता दो मुझे

देह का जिक्र सुनके
मैं छिपाती हूँ खुद को खुद में
और
ये जो वस्त्रहरण करते हो आँखों के लेंस
से
लगा देते हो टूकड़ों का ढेर नजर की धार
से

जरा बता दो मुझे

डर है मुझसे ?
या
दफना रहे हो मुझको लूट जाने के भय से
जरा बता दो मुझे

मैं नहीं तो तुम कहाँ
तुम नहीं तो मैं कैसे-ये समझते नहीं
या नासमझ हो हद से
जरा बता दो मुझे
जरा बता दो मुझे ...।।

संघमित्रा राएगुरु

शोषण का पर्याय



ना रंजना
री की भावनात्मक मानसिक स्तर पर पुरुषों से समकक्षता होते भी दैहिक स्तर पर उसकी असमर्थता एक ऐसी विसंगति जन्य संत्रास मयी यंत्रणा को उत्पन्न करती है, जिसकी पीड़ा से साक्षात्कार नारी का जन्म लेकर ही किया जा सकता है। समाज और परिवार की जाने कितनी उचित अनुचित लक्ष्मण रेखाएँ उसकी इस केन्द्रीभूत विवशता का ही परिणाम है। परिवार की मान मर्यादा, लोक प्रतिष्ठा जितनी नारी पर आश्रित होती है उतनी पुरुष पर नहीं। उसके कमजोर क्षणों की चाही अनचाही भूलें उसके आने वाले कल को जितना प्रभावित करती है, वैसा दुष्परिणाम पुरुष के हिस्से में नहीं आता, पता नहीं प्रकृति ने ये सारा अन्याय नारी के साथ ही क्यों किया? उसका सबसे बड़ा दोष उसकी कोमल दैहिक संरचना बन गई। पुरुषों के आचरण की बगुलाभक्ति पुरुष प्रधान समाज की दृष्टि में असंदिग्ध होती है, लेकिन नारी के हिस्से में आता है, मात्र प्रताड़ना लाक्षण और घोर

अपमान। तब उस अंधे चक्रवात में विकल्प या तो रस्सी के फंदे पर टिकता है, या फिर नरक तुल्य बजबजाती उन गलियों से होकर गुजरता है, जहाँ जिस्म ही नहीं, एक दिन जमीर भी बिकने को मजबूर हो जाता है। नारी के इस नियति की क्रूर विडम्बना को, जहरीली सच्चाई को नारी मुक्ति और विकास के सम्बन्ध में बड़ी बड़ी आंकड़े बाजी करने वाली संस्थायें या पत्रिकायें क्या अस्वीकार कर सकती है? इसी कारण उनके साथ हवस का धिनौना खेल सदियों से खेल जा रहा है। क्रूरता केवल कमजोर के साथ ही की जा सकती है। यह आदम युगीन समस्या कभी नारियों को मनुष्यता के अधिकार दिलाएगी, दायम दर्जे की नागरिकता से छुटकारा दिलाएगी, इसमें संदेह है। क्योंकि वर्तमान सभ्यता का विक्षिप्त विकास जो वासना और हिंसा के मौलिक हथियारों को, पैना और नुकीला बना कर अपनी दुकान चलाता हो, वह नारी की आकर्षण का देह का, व्यावसायिक शोषण ही कर सकता है। इसे वास्तविक समानता के स्तर पर नहीं लायेगा।

वस्तुतः चिंतन इस दिवालियेपन की जड़ो समाज की उस वीभत्स व्यवस्था में ही कही गहरे जमीं है जो पुत्री की अपेक्षा पुत्र को, अधिक महत्त्व देती है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति के प्रत्येक अवसरों में उसी की योग्यता को प्राथमिकता देती है। परिवार में पुत्र के सर्वथा अनुचित आचरण की भी अभ्यर्थना की जाती है, उसकी घृष्टताओं को भी उसके पौरुष का प्रतीक बना दिया जाता है। उसकी हर उचित अनुचित हरकत को अनदेखा करने का परिणाम ये होता है, कि वह स्वयं को जन्म जात श्रेष्ठ मानने लगता है। श्रेष्ठता की यह ग्रंथि उसके स्वच्छन्द आचरण में उत्तरोत्तर विकसित होती हुई, व्यस्क होने पर नारी के प्रति अभद्र, अश्लील व्यवहार में परिणत हो जाती है, जबकि नारी की स्थिति परिवार में इससे सर्वथा भिन्न होती है, वह प्रारंभ से ही नाना मर्यादाओं के, वर्जनाओं के, दुष्कर व्यूह में घुट्टी पिसती रहती है। हिंदुस्तानी मध्य समाज में शैशव से वार्धक्य तक पुरुष की छत्र छाया ही उसके लिए सम्मान से जीने का रक्षा कवच सिद्ध होता है, जिस नारी की अग्नि परीक्षा का दायित्व मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम ने संभाला, वह विकृत अर्थों

के साथ आज भी उपस्थित है। मनु की व्यवस्था से संचालित इस समाज में उसकी मांसलता को ही दैहिकता को ही विशेष रूप से प्रमुखता दी जाती है। सामंती चिंतन से ग्रस्त हमारा मीडिया भी स्त्री को सजी धजी नायिका बना कर, घरेलू साजिशों में लिप्त नीच मनो वृत्तियों से ग्रस्त दिखाता है। आखिर पुरुष प्रधान समाज में पुरुषों की ही तानाशाही पर अंकुश कौन लगाएगा ? इन बगुला भक्तों की पोल पट्टी खोलने का काम महिलाओं को ही करना होगा। न्याय का यह महाभारत उन्हें अकेले ही जितना है, कोई कृष्ण या अर्जुन आकर उनके भाग्य की रेखाएँ बदलेगा, इस भ्रम में उन्हें नहीं रहना चाहिए। अपनी अस्मिता की गौरव शाली पहचान के लिए महिलाओं को, अद्भुत संकल्प शक्ति, अदम्य साहस और सज्जनात्मक तेजस्विता के साथ संघर्ष शील होना है, लगातार बिना डरे, बिना हारे। आत्म सम्मान बेच कर न जीने की सौगंध खानी है, दान में मिले हर सुख को तिलांजलि देना होगा, देवी की उपाधि धारण कर स्वयं को धन्य सम झूते हुए, समर्पण पंथ की आहुति बन जाने वाली मनश्चेतना से मुक्ति पानी होगी। अपवादों को छोड़ कर लगभग सभी वर्गों में महिलाओं की स्थिति शोचनीय ही है, वे मात्र पुरुषों की जीवित संपत्ति और घर की दासी बन कर जीवन भर तिरस्कृत होने को बाध्य है। इसके लिए उनकी कुछ कमजोरियाँ भी उत्तर दायी है, पुरुषों के प्रशंसा के मीठे जहर से उनका मोह भंग जरूरी है। आडम्बर पूर्ण जीवन शैली पर आधारित पाश्चात्य नग्नता मूलक फैशन से भी हट कर उन्हें शालीन वस्त्रों को अपनाना चाहिए, अपने आकर्षण को विकृत ढंग से उभरने का कुत्सित चलन अंत में उन्हें ही ओछी द्रष्टि का शिकार बना देता है, महिलायें यदि अपने व्यक्तित्व का आधार तितली नहीं, मधु मक्खी रक्खें, और स्वाभाविक लज्जा के माधुर्य को नारी सुलभ गरिमा को तीव्र बौद्धिक चारित्रिक, क्षमता द्वारा निरंतर उर्ज्वस्वित रखे, और उत्तरोत्तर आर्थिक स्वावलंबन की ओर अग्रसर रहें, तो उन्हें हराना नामुमकिन होगा। वे अपनी शक्ति पहचाने, खुद को किसी के भी हाथों का खिलौना न बन ने दे। वे दुर्गा काली, सरस्वती बने, तेजस्वी बने, आज कम से कम समय उनके साथ है कानून भी साथ है, अब ना झुके ना डरे।

□□□

दो गजल

1

हो रहा हूँ आज पागल, ये नजारे देखकर।
रो पड़ी सूखी नदी दोनों किनारे देखकर।।

मर चुका था क्या पता, कितने दिनों पहले मगर,
हो गया जिन्दा मुकद्दर के सितारे देखकर।

खेलने को खेल सकते, थे खिलाड़ी और भी,
सैकड़ों खुश थे मगर, जलवे हमारे देखकर।

"हाँ" न की पर मुस्कराने की अदा "ना" में न थी
इसलिए मैं आ गया, नखरे तुम्हारे देखकर।

हाथ में पत्थर लिए, दो चार आए थे इधर,
भागती आई पुलिस, शैतान सारे देखकर।

दूर होती है उदासी, तोतली आवाज से,
और हो जाती चिकित्सा, कुछ दुलारे देखकर।

"प्राण" महफिल में रहेंगे, तब तलक हम हैं यहाँ
बाद में क्या कौन समझेगा इशारे देखकर।

2

आप शहरों में पले लगते हो।
जब कि गाँवों से भले लगते हो।।1।।

एक अंदाज अलग दिखता जब,
प्यार करते हो गले लगते हो।।2।।

शाख सा सूख गया क्यों चेहरा,
आज फूले न फले लगते हो।।3।।

रंज इतना कि खुशी ही गायब,
यार नफरत में जले लगते हो।।4।।

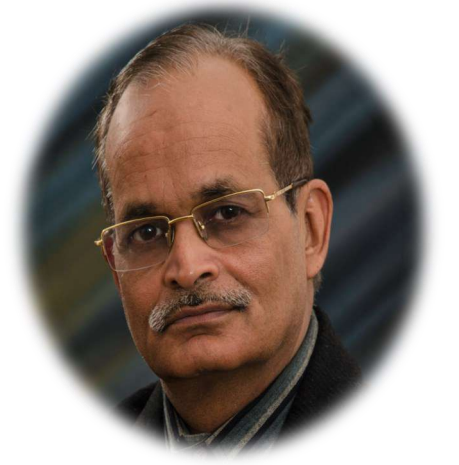
वक्त की मार सहन करने को,
खास साँचे में ढले लगते हो।।5।।

लाख बोलो कि अलग हूँ लेकिन,
सबके परचम के तले लगते हो।।6।।

प्यार आसान नहीं होता है,
जान कर और गले लगते हो।।7।।

गैर छलता न किसी को खलता,
"प्राण" अपनों से छले लगते हो।।8।।

गिरेन्द्रसिंह भदौरिया "प्राण"



गगनचुम्बी

भवन बनवाया गया था गगनचुम्बी
बोझ से उम्मीद के भहरा गया है

पिल पड़े सब छोड़ कर अखबार वाले
खबर मोटे अक्षरों में ही छपेगी
करवटें कुछ दिन में ही दम तोड़ देंगी
जल रही धरती भला कब तक तपेगी

मर गये वादे सभी ताजी हवा के
धुवां काली सोच का गहरा गया है

बन गया है तंत्र सारा ऊँट गाड़ी
बिना कुछ खाये जगह से क्यों हिलेगा
प्रश्न लेकर ख्वाब लाइन में लगे हैं
चल रही बैठक सही उत्तर मिलेगा

खा गया था खेत सारा वो सिपाही
क्रान्ति का झण्डा पुनः फहरा गया है

आ गया त्योहार मेढ़क गा रहे हैं
राग फिर बरसात का सदियों पुराना
गिरगिटों की फौज कसमें खा रही है
आ गई है ओढ़ कर गुजरा जमाना

लोग सारा खेल पढ़ने में लगे हैं
कौन अपराधी किसे ठहरा गया है

सूर्य प्रकाश मिश्र



गाँधी जी की हमसफर रहीं कस्तूरबा

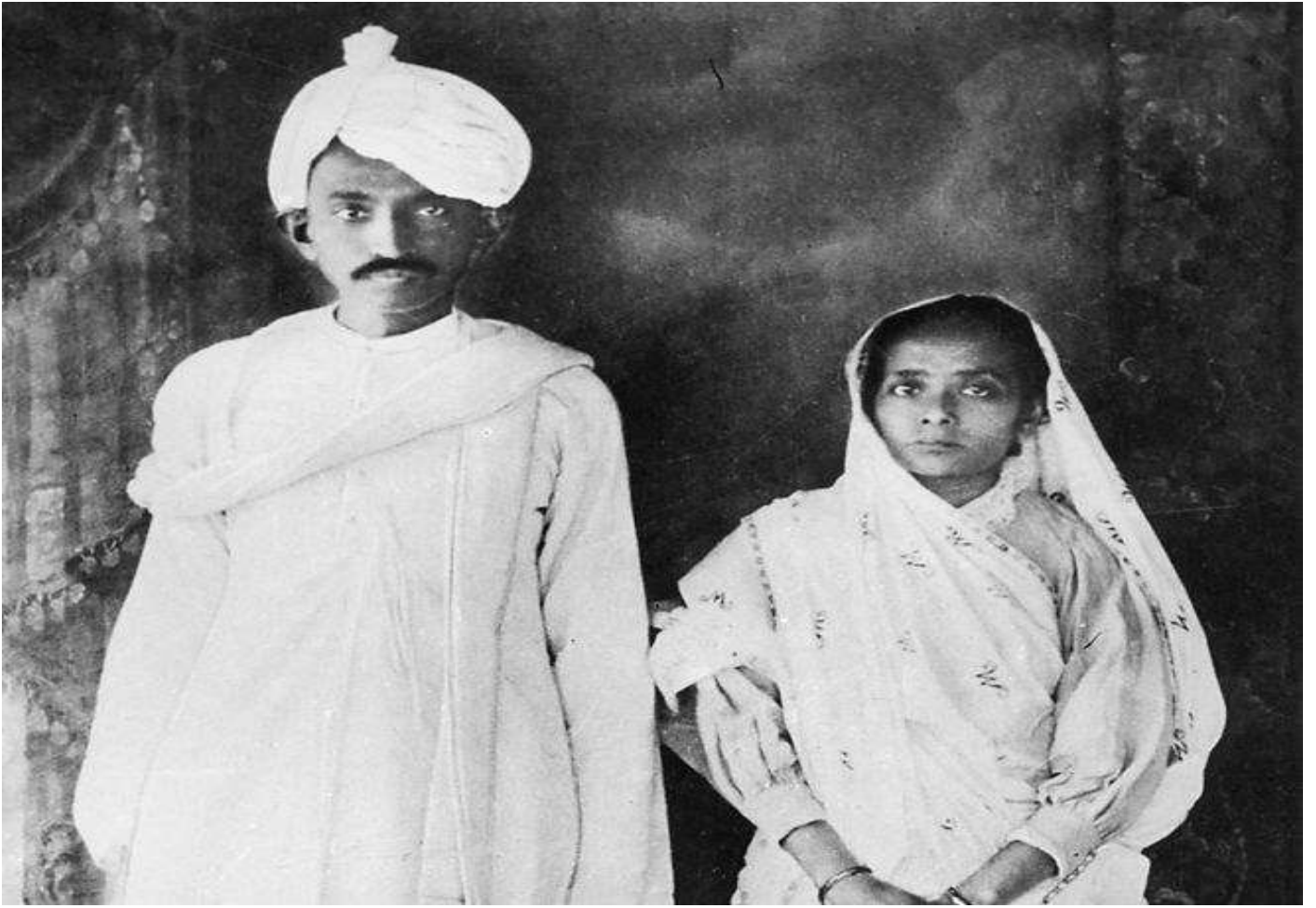
अंतर्राष्ट्रीय मातृ दिवस (14 मई) पर विशेष
माँ का रिश्ता सबसे अनमोल

माँ दुनिया का सबसे अनमोल रिश्ता है। एक ऐसा रिश्ता जिसमें सिर्फ अपनापन और प्यार होता है। माँ हमारे जीवन में सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखती है और माँ की वजह से हम आज इस दुनिया में हैं। माँ शब्द जुबान पर आते ही मन श्रद्धा से भर जाता है। दिल की गहराईयो में प्यार का सागर उमड़ने लगता है। माँ की हर सीख हमें याद आती है, जो उन्होंने हमें बचपन में सिखाई है। हर व्यक्ति को अपनी माँ बहुत अच्छी लगती है। सभी कहते हैं कि मेरी माँ के जैसा कोई नहीं है। क्योंकि हर बच्चे के शरीर में माँ का रक्त

प्रवाहित होता रहता है। माँ अपनी आयु के सुखद क्षणों को अपनी संतानों पर न्यौछावर कर देती है। उनका निस्वार्थ स्नेह और समर्पण हमें हमेशा याद रहता है। माँ जन्मदात्री के साथ-साथ ज्ञान और शक्तिदायिनी भी है।

दुनिया में माँ का एक ऐसा अनूठा रिश्ता है, जो सदैव दिल के करीब होता है। हर छोटी-बड़ी बात हम माँ से शेयर करते हैं। जब भी कभी उलझन में होते हैं तो माँ से बात करके जो आश्वस्ति मिलती है, वह कहीं नहीं। दुनिया के किसी भी कोने में रहें, माँ की लोरी, प्यार भरी डांट और चपत, माँ का प्यार, दुलार, स्नेह, अपनत्व व ममत्व, माँ के हाथ का बना हुआ खाना, किसी से झगड़ा करके माँ के आँचल में छुप कर अपने को महफूज समझना, बीमार होने पर रात भर माँ का जगकर गोदी में सर संपर्क भाषा भारती, मई—2023

लिए बैठे रहना, हमारी हर छोटी से छोटी जिद को पूरी करना, हमारी सफलता के लिए देवी-देवताओं से मन्तें माँगना ।।।।। और भी न जाने क्या-क्या कष्ट माँ हमारे लिए सहती है। जब आपको चोट लगती है तो सबसे पहले जिसकी याद आती है वह कौन है? और किसे सुनाई थी आपके अपनी तोतली जुबान में पहली कविता? और कोई नहीं, वह माँ ही तो है। जरा सोचिए, अगर माँ सुबह जल्दी आपको न उठाए तो आप स्कूल कैसे पहुँच पाएंगे। माँ ही तो है जो आपकी हर छोटी से छोटी जरूरत के लिए भी कई-कई बार टोकती है। एक दिन हम सफलता के पायदान पर चढ़ते हुए अपनी अलग ही जिदगी बसा लेते हैं। हम माँ की नजरों से दूर अपनी दुनिया में भले ही अलमस्त रहते हैं, फिर भी माँ रोज हमारी चिंता करती है।



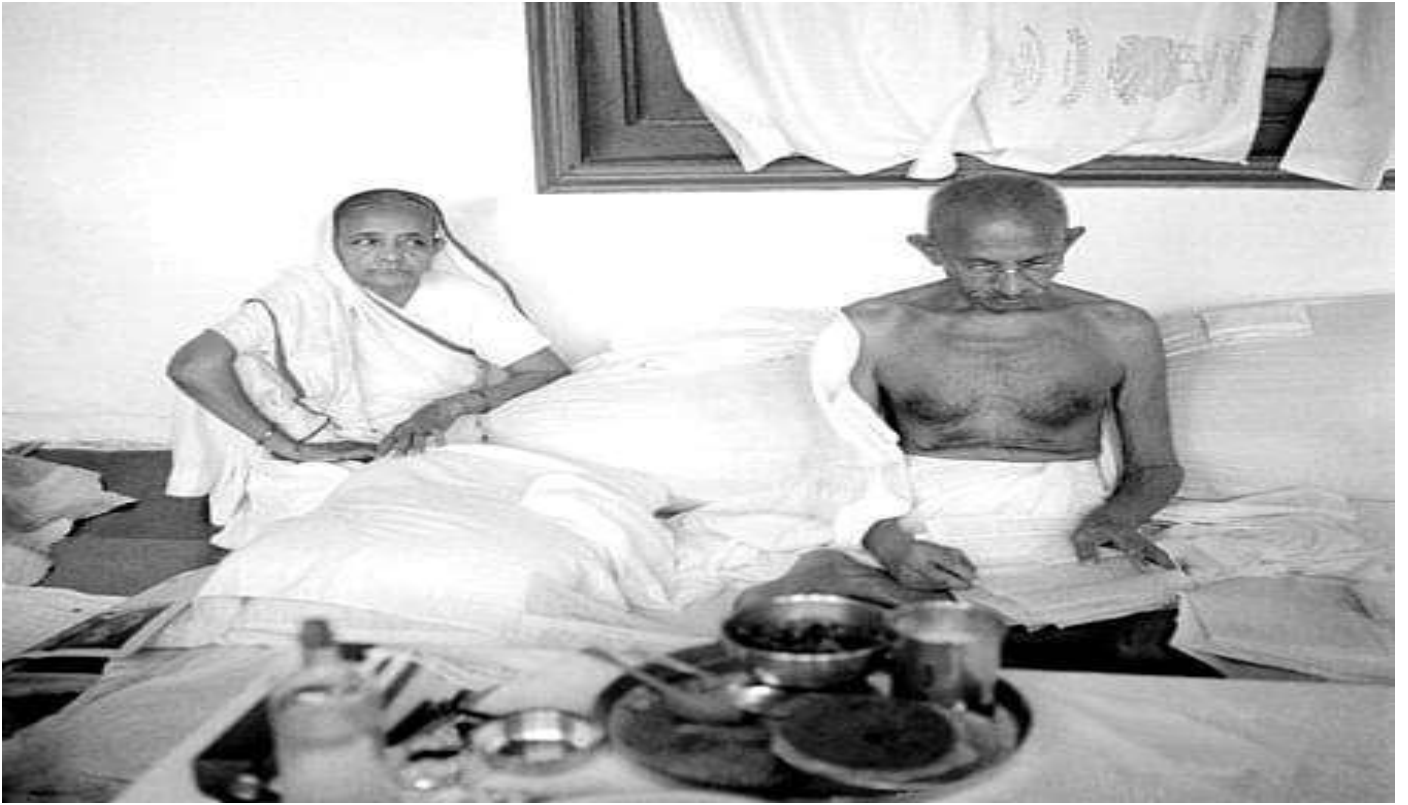
हम सोचते हैं कि हम बड़े हो चुके हैं, पर माँ की निगाह में तो हम बच्चे ही हैं। माँ की इबादत हर दिन भी करें तो भी उसका कर्ज नहीं चुका सकते। कहते हैं ईश्वर ने अपनी कमी पूरी करने के लिए इस धरा पर माँ को भेजा। इस धरा पर माँ ईश्वर का जीवंत रूप है। माँ को खुशियाँ और सम्मान देने के लिए पूरी जिंदगी भी कम होती है।

भारतीय परंपरा में मातृ शक्ति का विशिष्ट स्थान है। यहाँ मातृ पूजा की सनातन परंपरा रही है और हर जीवनदायिनी को माँ का दर्जा दिया गया है, फिर चाहे वह धरती हो या प्रकृति। यहाँ जननी को स्वर्ग से भी बढ़कर माना गया है। माता भूमि: पुत्रोहं पृथिव्या: (भूमि मेरी माँ है और मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ) कहकर पालन-पोषण करने वाली धरती को एवं मोक्षदात्री पतित पावनी गंगा को भी माँ कहकर सम्मानित किया जाता है। माँ वह ममतामय शब्द है, जिसकी संकृति से ही नारी हृदय का रोम-रोम करुणा, ममता एवं वात्सल्य से पुलकित हो जाता है और मंदिर की भाँति पावन स्वर भरने वाली घंटियाँ बजने लगती हैं। 'मातृदेवो भव' कहकर रोम-रोम में पृथ्वी पर ईश्वररूपी माँ के प्रति दैवीय भाव की भावना व्यक्त की गई है। नवरात्र

जैसे पवित्र त्यौहार तो मातृ शक्ति को ही समर्पित होते हैं। भारतीय परम्परा में मातृ शक्ति के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिए मातृ नवमी (श्राद्ध पक्ष में) की तिथि सुनिश्चित की गयी है।



वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भी देखें तो मातृ पूजा का इतिहास सदियों पुराना एवं प्राचीन है। माँ भगवान का बनाया एक ऐसा तोहफा है जिसकी जितनी प्रशंसा की जाए वह कम ही है। अतुलनीय, अद्भुत, अकल्पनीय कुछ इससे भी बढ़कर है माँ! मातृ पूजा का रिवाज पुराने ग्रीस से उत्पन्न हुआ है, जो ग्रीक देवताओं की माँ स्त्रेले के सम्मान में मनाया जाता था। यह त्यौहार एशिया माइनर के आस-पास और साथ ही साथ रोम में भी वसंत विषुव के आस-पास मनाया जाता था। प्राचीन रोमवासी एक अन्य छुट्टी मनाते थे, जिसका नाम है मेट्रोनालिया, जो जूनो को समर्पित था, यद्यपि इस दिन माताओं को उपहार दिये जाते थे। यूरोप और ब्रिटेन में कई प्रचलित परम्पराएँ हैं जहाँ एक विशिष्ट रविवार को मातृत्व और माताओं को सम्मानित किया जाता था, जिसे मदर्निंग सण्डे कहा जाता था। यूनान में वसंत ऋतु के आगमन पर परमेश्वर की माँ को सम्मानित करने के लिए यह दिवस मनाया जाता था। 16वीं सदी में इंग्लैंड का ईसाई समुदाय ईशु की माँ मद्र मेरी को सम्मानित करने के लिए यह त्यौहार मनाने लगा। वस्तुतः 'मातृ दिवस' मनाने का मूल



कारण मातृ शक्ति को सम्मान देना और एक शिशु के उत्थान में उसकी महान भूमिका को सलाम करना है।

भारतीय संस्कृति माँ को सम्मान देने वाली संस्कृति है। लेकिन जिस "मदर्स डे" को मई माह के दूसरे रविवार को सेलिब्रेट करते हैं, उसकी शुरुआत अमेरिका में वर्ष 1908 में हुई। वेस्ट वर्जिनिया के ग्राफ्टन शहर की रहने वाली अन्ना जारविस ने सबसे पहले अपनी माँ की याद में मदर्स डे मनाने का फैसला किया। अन्ना जारविस सिर्फ अपनी माँ के लिए ही नहीं, बल्कि दुनिया भर की माँओं को उनकी ममता का सम्मान देना चाहती थीं, जिसके लिए उन्होंने लगातार संघर्ष किया। अंततः 1912 में मई के दूसरे रविवार को "वर्ल्ड मदर्स डे" के तौर पर मनाया गया। मदर्स डे को आधिकारिक बनाने का निर्णय अमरीकी राष्ट्रपति वुड्रो विल्सन ने 8 मई, 1914 को लिया। 8 मई, 1914 को अन्ना की कठिन मेहनत के बाद तत्कालीन अमरीकी राष्ट्रपति वुड्रो विल्सन ने मई माह के दूसरे रविवार को मदर्स डे मनाने और माँ के सम्मान में एक दिन के अवकाश की सार्वजनिक घोषणा की। वे समझ रहे थे कि सम्मान, श्रद्धा के साथ माताओं का सशक्तीकरण होना चाहिए, जिससे मातृत्व शक्ति के प्रभाव से युद्धों की विभीषिका रुके।

तब से हर वर्ष मई के दूसरे रविवार को 'मदर्स डे' मनाया जाता है। अमेरिका में मातृ दिवस (मदर्स डे) पर राष्ट्रीय अवकाश होता है। अलग-अलग देशों में मदर्स डे अलग-अलग

तारीख पर मनाया जाता है। 1920 तक आते-आते हॉलमार्क आदि कंपनियों ने इस खास दिवस के लिए कार्ड और गिफ्ट आदि बाजार में उतार दिए और आज दुनिया भर में मदर्स डे बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। विश्व में कुछ जगहों पर लोग अपनी माँ के लिए लाल गुलाब खरीदते हैं तो वहीं जिनकी माँ अब इस दुनिया में नहीं हैं, वह उनकी याद में सफेद गुलाब खरीदते हैं।

विवाह के बाद कस्तूरबा और मोहनदास 1888 ई तक लगभग साथ-साथ ही रहे किंतु गाँधी जी के इंग्लैंड प्रवास के बाद से लगभग अगले 12 वर्ष तक दोनों प्रायः अलग-अलग से रहे। कस्तूरबा ने जब पहली बार साल 1888 में बेटे को जन्म दिया तब महात्मा गांधी देश में नहीं थे। वो इंग्लैंड में पढ़ाई कर रहे थे। कस्तूरबा ने अकेले ही अपने बेटे हीरालाल को पालपोस कर बड़ा किया।

अब भारत में भी पाश्चात्य देशों की तरह 'मदर्स डे' को एक खास दिवस पर मनाने का महत्व बढ़ रहा है। इस दिन माँ के प्रति सम्मान-प्यार व्यक्त करने के लिए कार्ड्स, फूल व अन्य उपहार भेंट किये जाते हैं। माँ और ममता को सम्मान देने का दिन है 'मदर्स डे'। ग्रामीण इलाकों में अभी भी इस दिवस के प्रति अनभिज्ञता है पर नगरों में यह एक फेस्टिवल का रूप ले चुका है। काफी हद तक इसका व्यवसायीकरण भी हो चुका है। लेकिन माँ को खुश करने के लिए महंगे तोहफों या सरप्राइज मैसेज की जरूरत नहीं होती, बल्कि वह तो खुश हो जाती है, आपकी छोटी सी ईमानदारी से भी।

किसी एक खास दिन मदर्स डे मनाना आसान लगता है पर माँ को याद करने से पहले



जरा इन आंकड़ों पर भी गौर फरमाएं। हो सकता है कि इन्हें पढ़ते-पढ़ते आपकी आँखें नम हो जाएँ। नम आँखों में इन आँकड़ों की कमी-बेशी के बीच भी प्यार और त्याग से सराबोर माँ का जीवन छुपा हुआ। अब जरा ठहरकर सोचें इस प्यार और त्याग के बदले में हम उसे क्या देते हैं? माँ आज भी गृहस्थी और कैरियर के बीच झूल रही हैं। बच्चों की परवरिश के बीच कैरियर की तमन्ना कब दम तोड़ जाती है, पता ही नहीं चलता। आंकड़े बताते हैं कि 77 फीसदी माँओं ने पहली संतान के बाद अपने सपने छोड़ दिये, वहीं 91 फीसदी माताएं बच्चों से ये सपने पूरा करने की उम्मीदें रखती हैं। पेशेवर जिंदगी की कठिनाइयाँ को लेकर प्यू रिसर्च सेंटर द्वारा 2012 में किये गये एकसर्वे पर गौर करें तो स्थिति स्वतःस्पष्ट हो जाती है। आज भी 32 फीसदी माँएँ ही फुल टाइम नौकरी की ख्वाहिशमंद हैं। 71 फीसदी माताओं के लिए तो नौकरी करना आर्थिक मजबूरी है। 67 फीसदी माँएँ घर रहकर ही काम करने की सुविधा चाहती हैं, वहीं 47 फीसदी माँएँ पार्ट टाइम नौकरी करने में ज्यादा सहज करती हैं। 46 फीसदी माताएँ बच्चों के लिए कैरियर कुर्बान कर देती हैं तो 29 फीसदी ने बच्चों की परवरिश के लिए नौकरी छोड़ दी। 60 फीसदी

माँएँ खुद से ज्यादा बच्चों के बीमार होने पर

किंतु जब उनके इस अनुरोध पर कोई ध्यान नहीं दिया गया तो उन्होंने उपवास करना आरंभ कर दिया।

अंततः पाँचवें दिन अधिकारियों को झुकना पड़ा।

किंतु जो फल दिए गए वह पूरे भोजन के लिये पर्याप्त न थे।

अतः कस्तूरबा बा को तीन महीने जेल में आधे पेट भोजन पर रहना पड़ा।

जब वे जेल से छूटीं तो उनका शरीर ढांचा मात्र रह गया था, पर उनके हौसले में कोई कमी नहीं थी।

छुट्टियाँ लेती है। इसी प्रकार जीवन की आपाधापी में सेहत के मोर्चे पर देखे तो माताएं रोजना रात को औसतन 2 घंटे नींद गँवाती हैं। 88 फीसदी माँएँ तनाव महसूस करती है। 44 फीसदी महिलाएं खानपान पर ध्यान नहीं दे पातीं वहीं 40 फीसदी हड़बड़ी में रहती हुई रंग-रूप पर ध्यान नहीं दे पातीं। 43 फीसदी माँएँ डिप्रेशन तो 19 फीसदी माइग्रेन से पीड़ित हैं। घर-समाज में माताओं द्वारा इतना सब कुछ त्याग करने के बावजूद कई बार स्थितियां उनके लिये बेहद जिल्लत भरी होती हैं। हेल्पेज इंडिया-2011 सर्वे के अनुसार घर में भी 70 फीसदी माँएँ बहू-बेटे का अत्याचार झेलती हैं तो 64 फीसदी बहुएँ सास को प्रताड़ित करती हैं। 70 फीसदी बच्चे माँ-बाप से झगड़े करते हैं तो 87 फीसदी बुजुर्ग माँओं को उपेक्षा की शिकायत है। 23 फीसदी बूढ़ी माँएँ काम करने को मजबूर हैं। 15, 000 से ज्यादा बुजुर्ग महिलाएँ वृदावन में भीख मँगाकर गुजर-बसर करती हैं। इनमें से ज्यादातर बच्चों द्वारा छोड़ी गई माँएँ हैं। यह स्थिति देख कर कोई भी असहज महसूस करेगा।

ऐसे में रिश्तों पर हावी होती स्वार्थपरता और व्यवसायिकता के बीच यह भी सोचने की



अल्लाइमर

कै

से मैंने उनके दस हजार रूपए उड़ा लिये, बाबूजी को आज तक पता ही नहीं चला। वो बेचारे अपनी यादाश्त को कोस रहे हैं। माँ का भी वही हाल है। संदूक की चाबी कहीं भी भूल जाती है। दिन भर खोजती है और बाद में पता चलता है कि चाबी तो उसके पल्लू में ही थी। चुपके से किसी दिन चाबी निकालकर संदूक से माँ के गहने उड़ा लेना। बेटी दामाद और बेटों के भ्रम में पड़ी माँ को कभी याद नहीं आया कि उसने गहने किसको दिये हैं.....इससे पहले कि भाई, भौजाई, बहन और जीजा कुछ सोचें, हमें माँ के अल्लाइमर का फायदा उठा लेना है।

चिंता

पा

पा की अलग चिंता है-

पढ़ाया, लिखाया और इस काबिल बनाया कि अपने पैरों पर खड़ी हो सके और देखो शादी होते ही बेटी बदल गयी। पूरी सैलरी पति को देने लगी। वाह! उसकी पढ़ाई लिखाई और शादी पर लाखों रुपये जो मैंने खर्च किये उसका क्या?

पति को अलग चिंता है- अरे! तुम तो शादी के चार साल पहले से जाँब कर रही हो? कुछ भी बचाकर नहीं लायी? इतने सालों की सैलरी मायके में दे आयी? मुर्ख हो क्या? पता नहीं था कि पति का घर ही औरत का असली घर होता है? भविष्य की तनिक भी चिंता नहीं थी?

और इन दो लोगों की चिंताओं के बीच पूजा की अलग चिंता थी कि उसकी चिंता किसे है, पापा को या पति को?

दीपक कुमार

जरूरत है कि रिश्ते कहीं किसी दिन विशेष के मोहताज न हो जायें। माँ तो जननी है, वह अपने बच्चों के लिए हर कुछ बर्दाश्त कर लेती है। पर दुःख तब होता है जब माँ की सहनशीलता और स्नेह को उसकी कमजोरी मानकर उसके साथ दोगधर व्यवहार किया जाता है। माँ के लिए बहुत कुछ लिखा-पढ़ा जाता है, यह कला और साहित्य का एक प्रमुख विषय भी है, माँ के लिए तमाम संवेदनाएं प्रकट की जाती हैं पर माँ अभी भी अकेली है। जिन बेटों-बेटियों को उसने दुनिया में सर उठाने लायक बनाया, शायद उनके पास ही माँ के लिए समय नहीं है। अधिकतर घरों में माँ की महत्ता को गौण बना दिया गया है। आज भी माँ को अपनी संतानों से किसी धन या ऐश्वर्य की लिप्सा नहीं, वह तो बस यही चाहती है कि उसकी संतान जहाँ रहे खुश रहे। पर माँ के प्रति अपने दायित्वों के निर्वाह में यह पीढ़ी बहुत पीछे है। माँ के त्याग, तपस्या, प्यार का न तो कोई जवाब होता है और न ही एक दिन में इसका कोई कर्ज उतारा जा सकता है। मत भूलिए कि आज हम-आप जैसा अपनी माँ से व्यवहार करते हैं, वही संस्कार अगली पीढ़ियों में भी जा रहे हैं।

□□□

माँ के लिए तमाम संवेदनाएं प्रकट की जाती हैं पर माँ अभी भी अकेली है। जिन बेटों-बेटियों को उसने दुनिया में सर उठाने लायक बनाया, शायद उनके पास ही माँ के लिए समय नहीं है। अधिकतर घरों में माँ की महत्ता को गौण बना दिया गया है। आज भी माँ को अपनी संतानों से किसी धन या ऐश्वर्य की लिप्सा नहीं, वह तो बस यही चाहती है कि उसकी संतान जहाँ रहे खुश रहे। पर माँ के प्रति अपने दायित्वों के निर्वाह में यह पीढ़ी बहुत पीछे है।



पद्मा अग्रवाल

महिलायें और समानता की मानसिकता...

अंतर्राष्ट्रीय मातृ दिवस (14 मई) पर विशेष

भा

रतीय संविधान ने महिलाओं को पुरुषों के बराबर अधिकार दिये हैं संविधान के अनुच्छेद 14 में कहा गया है कि स्त्री पुरुष दोनों बराबर हैं। अनुच्छेद 15 के अंतर्गत महिलाओं के भेदभाव के विरुद्ध न्याय पाने का अधिकार प्राप्त है। समय समय पर मान सम्मान और अस्मिता की रक्षा के लिये भी कानून बनाये गये हैं।

महिलाओं को समानता का दर्जा दिलाने के लिये संघर्ष करने वाली महिला वकील 'वेल्ला अब्जुग' के अथक प्रयास से 1971 से 26 अगस्त को 'महिला समानता दिवस' के रूप में मनाया जाने लगा।

किसी भी समाज के पूर्ण विकास के लिये आधी आबादी को अलग थलग करके उसका विकास संभव नहीं है। इसके लिये महिलाओं की आर्थिक स्वतंत्रता आवश्यक है और इसके लिये महिलाओं का कामकाजी होना बहुत

आवश्यक है। जो भारत कभी 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता: 'की विचारधारा पर चलता था, आज महिलाओं पर अत्याचार के मामले में विश्व में अग्रणी और खतरनाक देश बन चुका है।

थॉमसन और रायटर्स फाउंडेशन ने महिलाओं के मुद्दे पर एक सर्वे जारी किया है - घरेलू कामों के लिये मानव तस्करी, जबरन शादी और बंधक बना कर यौन शोषण के लिहाज से भारत को खतरनाक करार दिया गया है। हमारे देश की सांस्कृतिक परंपराओं के कारण भी महिलाओं को एसिड अटैक, गर्भ में बच्ची की हत्या, बाल विवाह, और शारीरिक शोषण का सामना करना पड़ता है। देश के हर कोने से महिलाओं के साथ बलात्कार, यौन प्रताड़ना, दहेज के लिये जलाये जाने, मानसिक और शारीरिक प्रताड़ना और स्त्रियों के खरीद फरोख्त की घटनायें रोज समाचार पत्रों की सुर्खियां बनी रहती हैं।

ऐसे में महिला सुरक्षा कानून या समानता का क्या अर्थ रह जाता है?

महिला समानता दिवस के दिन विभिन्न क्षेत्रों

में महिलाओं के प्रति सम्मान, प्रशंसा और आदर प्रकट करते हुये महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक उपलब्धियों का गुणगान करके खुशी मनाई जाती है।

शिक्षा के प्रसार के बाद महिलाओं की स्थिति में सुधार आया है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के दौर में अब लड़कियों को बोझ की तरह नहीं देखा जा रहा है। शिक्षा के कारण महिलाओं की स्थिति और उनके प्रति समाज के नजरिया में काफी सकारात्मक सुधार देखा जा रहा है। सामाजिक, राजनैतिक, और आर्थिक सभी क्षेत्रों में महिलायें हर क्षेत्र में अपना परचम लहराती दिखाई पड़ रही हैं। समय के साथ अपने कदम बढ़ाती महिलायें समानता के लिये संघर्ष करती हुई सफलता की ओर कदम बढ़ाती जा रहीं हैं। यह देश के विकास के लिये बहुत सार्थक साबित हो रहा है।

महिलाओं को आजादी देते हुये सुप्रीम कोर्ट ने आर्टिकल 19 और 21 पर कहा कि अब एडल्ट्री अपराध नहीं है। महिला की यौन स्वायत्तता पर अपना जजमेंट दिया है। कोर्ट ने



कहा कि पति पत्नी की संपत्ति नहीं है, यदि वह अपने को उसका मालिक समझता है तो गलत है।

सरकार समय समय पर महिला सुरक्षा के लिये कानून में परिवर्तन और सुधार करती रहती है। उसी परिपेक्ष्य में तीन तलाक का बिल 1111 जिससे मुस्लिम महिलाओं की स्थिति में सुधार हो सके।

परंतु सोचने की बात यह है कि कठोर कानून बना देने से क्या महिलायें सुरक्षित हो जायेंगी? तो मेरे विचार से यह सोचना गलत है क्यों कि शरियत कानून करने वाले देश अफगानिस्तान, सऊदी अरब भी महिलाओं के लिये खतरनाक बताये जाते हैं।

आवश्यकता यह है कि व्यक्ति की मानसिकता को बदलने की-- बच्चों को परिवार के अंदर नारी के प्रति समानता की शिक्षा दी जाये 1111 जब पिता बच्चे के सामने मां पर अत्याचार करता है तो अनायास ही वह स्वयं भी भविष्य में स्त्री के साथ गलत व्यवहार कई बार करने लगता है।

आज हम सबको आधी आबादी के प्रति निर्मित दकियानूसी मानसिकता को बदलने की आवश्यकता है। देश की महिलाओं को ऐसा माहौल देना होगा, जिससे उनकी स्वतंत्र सोच विकसित हो और वह अपनी बात को खुलकर बिना किसी संकोच के समाज के सामने रख सकें।

महिलाओं को पंचायतों, नगर निकाय चुनाव में

50 प्रतिशत तथा सरकारी नौकरी में 35 प्रतिशत आरक्षण सुनिश्चित कर महिलाओं को पुरुष की तरह समान अधिकार देने का लाभ दिखाई पड़ रहा है। महिलाओं की दशा, दिशा बदलने में सरकार के सिवा गैर सरकारी स्तर पर व्यापक प्रयास का लाभ भी हो रहा है। वर्षों के लंबे संघर्ष के बाद महिलायें घर के साथ साथ हर क्षेत्र में अपनी क्षमता और प्रतिभा दिखा रही हैं। कई ऐसे क्षेत्र भी हैं जहां महिलाओं ने पुरुषों को पीछे छोड़ दिया है।

सीबीएसई के परिणाम में लगातार लड़कियां 6 वर्षों से लड़कों से आगे चल रही हैं। वैसे देश में आज भी महिलाओं की स्थिति में निरंतर सुधार की आवश्यकता महसूस की जा रही है। हालांकि सामाजिक भेदभाव के बाद भी महिलायें घर परिवार और समाज में असमानता झेलने को विवश हैं 1111 पुरुष समाज को महिलाओं के साथ समानता के व्यवहार को स्वीकार करने की आवश्यकता है। महिलाओं को भी अपने अधिकार के लिये जागरूक होना चाहिये 1111

महिलायें आज भी अपने अधिकारों का सही इस्तेमाल नहीं कर पातीं, अदालत तो जाना दूर की बात है 1111 इसकी सबसे बड़ी वजह यह है कि महिलायें स्वयं को इतना स्वतंत्र नहीं समझतीं कि इतना बड़ा कदम अकेले उठा सकें 1111 जो किसी मजबूरी वश अदालत तक पहुंच भी जाती हैं वह कानून के मकड़जाल में

उलझ कर भटकती रह जाती हैं।

घर से बाहर तक ऐसे विरोध और बवंडर का सामना करना पड़ता है कि जिसका सामना अकेले करना मुश्किल हो जाता है। इस नकारात्मक वातावरण का सामना करने के बजाय वह अन्याय को सहन करना बेहतर समझती हैं। कानून होते हुये भी वह उसकी मदद नहीं ले पाती हैं। आमतौर पर आज भी लोग औरतों को दोगुम् दर्जे का नागरिक ही मानते हैं। आज भी दहेज के लिये हजारों की संख्या में लड़कियां जलाई जा रही हैं। न जाने कितनी लड़कियों को यौन शोषण की यातनाओं से गुजरना पड़ता है। कितनी ही महिलायें अपनी संपत्ति से बेदखल होकर दर दर भटकने को मजबूर हैं।

महिला श्रमिकों या कर्मचारियों के साथ गांव से लेकर शहरों तक आर्थिक और दैहिक शोषण आम बात है।

महिला सुरक्षा कानून बनाये जाते हैं लेकिन मुश्किल यह है कि कितनी महिलायें इन कानूनों के प्रति जागरूक हैं या कितनी महिलायें इनका उपयोग कर पाती हैं। साक्षरता और जागरूकता के अभाव में महिलायें अपने खिलाफ होने वाले अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध आवाज ही नहीं उठा पातीं। साक्षर महिलाओं का प्रतिशत बढ़ कर अब 54 प्रतिशत हो गया है परंतु गांव की स्थिति अभी भी दयनीय है।

सच्चाई तो यह है कि आजादी के हिसाब से

राजनीति में आज भी महिलाओं की भागीदारी उतनी नहीं है, जितनी की होनी चाहिये। लोकसभा में 94 और राज्यसभा में 29 महिला सांसद हैं, जो कुल संख्या का 12 प्रतिशत है। राज्यों की विधान सभाओं में तो स्थिति और भी चिंताजनक है।

भारत में अनेक सरकारों ने महिला आरक्षण बिल लागू करने के लिये बार बार प्रयास किये परंतु इसमें अभी तक किसी भी सरकार को सफलता नहीं मिल पाई और बिल राजनीति की भेंट चढ़ गया।

भारतीय राजनीति में महिलाओं की भागीदारी कम होने के पीछे का कारण अब तक पितृ सत्तात्मक ढांचे का मौजूद होना। यह सिर्फ महिलाओं को राजनीति में प्रवेश करने से नहीं रोकता वरन् महिलाओं की स्वतंत्र सोच को ही नहीं विकसित होने दिया जाता अपितु समाज में महिलाओं को स्वतंत्र रूप से अपनी बात कहने का अवसर ही नहीं दिया जाता।

आज भी महिलाएं पुराने संस्कारों में जकड़ी हुई हैं और अन्याय और अत्याचार को अपनी नियति मान कर कानूनी पचड़ों से दूर रहने में ही अपनी भलाई समझती हैं। कभी परिवार के नाम पर तो कभी बच्चों के लिये तो कभी लोकलाज के नाम पर अन्याय और अत्याचार जीवन भर सहती रहती हैं। हमारे देश की कानूनी जटिलताओं के कारण भी कई बार महिलायें थक हार कर चुप हो जाती हैं। लोकलाज और बदनामी के डर से भी दैहिक, मानसिक शोषण के मामले भी कम दर्ज करवाये जाते हैं।

संपत्ति बंटवारे के मामले में भी महिलायें भावुकता के कारण अक्सर अपना हक छोड़ देती हैं।

परिवार के खिलाफ जाने से महिलायें बचना चाहती हैं। यदि आप अपने साथ अन्याय अत्याचार के लिये आवाज नहीं उठायेगीं तो भगवान् भी आपकी मदद नहीं कर सकता।

महिलायें पुरुष के समान हैं, इसके लिये समाज को महिलाओं के प्रति अपने दृष्टिकोण में अनिवार्य रूप से बदलाव लाने की आवश्यकता है। सच तो यह है कि आज भी स्त्री की पीड़ा, उसकी इच्छा

किसी के लिये कोई मायने नहीं रखती। अपने लिये समानता की राह पर चलने के लिये मार्ग के कांटे उन्हें हर दिन स्वयं ही निकालने होंगे।

□□□



गज़ल : केशव शरण

तितलियाँ दिखें भी कहाँ फूल जब खिले ही नहीं
फूल भी कहाँ से खिलें तुम मुझे मिले ही नहीं

रंज और गम से भरे पल सियाह, तन्हा बड़े
बर्फ़ की तरह सर्द हैं सख्त बोझिले ही नहीं

इक नवीन शुरुआत भी दिख नहीं रही है यहाँ
मेल-जोल के जो रहे आज सिलसिले ही नहीं

जिस तरह ज़रूरत रही धार मोड़ने की हमें
रेत में बना दें चमन उस तरह पिले ही नहीं

योजना सफ़र की बनी कारवां बनाया गया
मंजिलें धरी रह गई पाँव जब हिले ही नहीं

हम करें न ज़ाहिर कभी और तुम न देखो कभी
ज़ख्म-ज़ख्म है ज़िंदगी, दिल-जिगर छिले ही नहीं

अशक़ डोर, पलकें सुई, पर बहुत कठिन है रफू
रेशमी कलेजा नरम यूँ फटा सिले ही नहीं

2

जहान जितना सुहावना था न आज उससे सुहावना कम
मगर पड़ी बेड़ियाँ पगों में उमर-समय की कि घूमना कम

कभी नहीं थे उरुज पर यूँ हसीन जल्वे बसंतियों के
कभी नहीं थी निडाल हसरत कभी नहीं थी सुकामना कम

सहज कभी है न दिल न दुनिया जुड़ाव में दुख तनाव में दुख
न ज़िंदगी में विचित्र चीज़ न ज़िंदगी में विडम्बना कम

विरोधियों को करीब लाते यही हमारी विशेषता है
विराग पथ पर सुगढ़ बुतों की कभी नहीं की सराहना कम

धरम-करम सब सदा निभाये रहा हमारा उसूल जैसा
नहीं मिला है विशेष वर पर नहीं कभी की उपासना कम

कहा गया है कि वक्रत खुद में बहुत बड़ा है इलाज होता
भले भरे हैं न ज़ख्म पूरे मगर हुआ है कराहना कम

समझ गये हैं समझ नहीं है हसीन सूरत हसीन है बस
बड़ी शिकायत भले हमें है परन्तु देते उलाहना कम



दर्द एक पड़ाव

पढ़ो!

मुझे और पढ़ो---

अगर- मगर सामर्थ्य है

दर्द के बहुतेरे पैबन्द मिलेंगे

एक बार फिर गढ़ो--

गहराई से--चतुराई से --'सच्चाई से---

कथा-व्यथा के पन्ने उघड़े चीथड़ो मे
मिलेंगे

फिर भी मेरे हौंसले को सराहना -'

भीड मे भी अकेला खड़ा पाओगे-'

तुम्हे बता ही दूँ !

इस दर्द को बहुत चुपके से

हाशिये पर रख दिया है मैंने--

और अंधेरो के खिलाफ खड़ी हो गयी हूँ

--

मासूम मुसकानों को जिलाने

नवजात शिशुओं के लिये

सशरीरी मातृत्व गन्ध बटोरने

तुम्हे अपनी त्याग- तप - तपस्या का

प्रमाण देने

बंजर धरती पर खेत-खलिहान सा

लहलहाने

गर्म रोटी की महक से तमाम भूखों की

भूख मिटाने

मोटे से दाल-चावल के लगे लिपटे स्वाद

मे ज़रूरतमंदो को लपेटने--

तुम देखोगे!

मानोंगे -जानोंगे और समझोगे

अपने मौन में --

अपने एकान्त में

हमेशा -हमेशा मैं

सृजन के मंगल गीत ही गाऊंगी ----।

जया रावत

केशव शरण की कविताएँ

सम्पूर्ण मानवता के क्लेश

सेवाग्राम में रिनपोछे जी

सेवाग्राम में गौरैया

वाराणसी से
वर्धा के बीच
अनेक तरह के पंछी मिले
जो रेल की खिड़की से
जंगल-जंगल दिखे
जिनमें थे पलाश के सुन्दर-सुन्दर फूल खिले

गौरैया दिखी
सेवाग्राम में
बापू की कुटिया के भीतर
जो हमें देख
बाहर उड़ गई

वही दिखी फिर
बा की कुटिया में
पर पता नहीं कि
वही थी या दूसरी
वह भी हमें देख
बाहर उड़ गई

ऐतिहासिकता में डूबा
कुटियाओं का शान्त अहाता
पारकर जब पहुँचे हम
गौशाले के पास
उनका झुण्ड मिला
चहचहाता

एक प्रचुर उल्लास
महसूस हुआ मन में
और जगी
मधुर दिनों की आशा

आज भी

बापू के आश्रम के खेत
आज भी
बैल जोत रहे हैं
आज भी विनोबा के आश्रम के खेत

बैलों की यह कौन-सी पीढ़ी है

गायों के समेत
मालूम नहीं

लेकिन वे सुख-संतोष से हैं
ऐसे ही उनके पुरखे रहे होंगे
आजादी के पहले
और आजादी के बाद

इन खेतों में पड़ती है
आज भी वही खाद
जो बाहर से खरीदी नहीं जाती

गाय पीपल की छाँव में
आश्रम का ही हरा चारा
पगुराती
आज भी

इस देश के प्रदेश

देश यहाँ है
सेवाग्राम में
इस देश का प्रदेश
एक यहाँ है
पवनार में

लेकिन यह देश
कितना छोटा है
पूरी धरती के अनुपात में
सुई की नोक के
बराबर भी नहीं
उस पर सर्वथा अपूर्ण !

भूगोल कुछ नहीं
लेकिन इसका इतिहास बड़ा है
यहाँ आज भी एक विचार खड़ा है
जो उजास फैला सकता है
पूरी धरती पर
मनुष्यता का विकास करवा सकता है
पूरे विश्व में

पूरी पृथ्वी पर होंगे जब
इस देश के प्रदेश
मिटेंगे तब

निर्वासित तिब्बत सरकार के
पूर्व प्रधानमंत्री रिनपोछे जी
उद्बोधन दे रहे हैं
शान्त सभागार
ध्यानपूर्वक सुन रहा है

ऐसा लगता है
तिब्बत बोल रहा है
भारत सुन रहा
वही वाणी
जो गूँजी थी यहाँ
ढाई हजार साल पहले
जो कहती थी
चित्त का विकास महत्वपूर्ण है
चरित्र का विकास महत्वपूर्ण है
मनुष्य का विकास महत्वपूर्ण है
उसमें नहीं समाया था
सिर्फ विकास !
जो आज
चीन भी कर रहा है
विनाश के कगार पर

सर्वोदय क्यों नहीं
सब मिलाकर ?

अपने धार्मिक पोशाक में
एक ऋषि लगते
रिनपोछे जी
उद्बोधन के बाद
दुबारा दिखे हैं
बापू की कुटी से निकलते

वे कहाँ जायेंगे,
तिब्बत
या सारनाथ ?



शुक्रिया दोस्त

ट्रे

न के जनरल बोगी में घुसते ही सीट तलाशते हुए सीधी नजर पड़ी खिड़की पर बैठे गबरू जवान पर जो सूटेड बूटेड, टाई चश्मा पहनें बगल में बैग रख कर खिड़की से बाहर झांक रहा था दीक्षा उसके सामने जा खड़ी हुई।

सर...जगह मिलेगी

जी जी, बैठिए बैग उठा कर गोद में रख वह पुनः खिड़की के बाहर देखने लगा था। दीक्षा का मन हुआ कहे कि मुझे खिड़की की तरफ बैठने दीजिए लेकिन वह इतनी तल्लीनता से बाहर के दृश्य देखने में तल्लीन था कि मन मसोस कर रह गयी। ये बात उस पुरुष ने भी महसूस किया लेकिन अनभिग्य बना रहा। दीक्षा भी तो झट अपने पर्स से मोबाइल निकाल नोट्स बुक खोल कुछ लिखने लगी थी। छोटे छोटे से स्टेशनों से गुजरती ट्रेन बढ़ती जा रही थी। दीक्षा सर झुकाए लिखती जा रही थी।

भीड़ चढ़ती उतरती रही अचानक दीक्षा की आंखों से टप टप आंसू निकालने लगे और फिर वो मोबाइल बंद कर आपने को सामान्य करने के लिए पर्स से रुमाल निकाल नाक और आंख पोछ कर आंख बंद कर पीछे सर टिका कर बैठ गई। खिड़कियों से नजर हट कर अब दीक्षा की तरफ कनखियों से देख रही थी। कुछ देर बाद दीक्षा ने आंखें खोली और फिर वो मोबाइल पर कुछ लिखने लगी। इस बार वह

बिल्कुल सामान्य थी।

क्या हुआ मैडम....क्या कोई परेशानी या उलझन है, मैंने अभी आपको अनमनस्क देखा

कुछ नहीं सरकुछ भी नहीं

बुरा मत मानिएगा ...बस यूँ ही पूछ लिया। वैसे मन में कोई व्यथा हो तो बात करने से कम हो सकती है। आप कुछ लिख रही हैं। जी जी ...बस एक कहानी लिख रही हूँ। ओहो तो आप लेखिका हैं।

नहीं नहीं, बस यूँ ही कुछ लिखती रहती हूँ। तो लिखने में आंसू निकलते है क्या। जब आत्मा की गहराई तक किसी बात को महसूस किया जाता है तो कथानक के स्वरूप स्वयं पर अनुभूति होती है।

ओ हो, ये बातवैसे मैडम मैं लेखनऊ सचिवालय में बाबू हूँ। आपको लिखते और भावनाओं में डूबते देख महसूस कर रहा हूँ

प्रतिमा शर्मा "पुष्प"



कि कहानियां हमारे जीवन के इर्द गिर्द घूमती रहती है। और हममें से ही कोई पात्र होता है। जी बस महसूस करने की बात होती है कि कौन सी बात आपको टच कर गयी और कितने गहरे उतर कर लेखनी में समाहित हो उठी है। वैसे मैडम आप और क्या करती हैं। मन ही मन झुंझला उठी थी जरा सा बात क्या कर ली अब इनको मेरी पूरी जीवनी जाननी है। लेकिन खुद को संयत करती हुई बोली उठी थी।

कुछ खास नहीं, बस यूँ ही आखिर कितनी सहजता से एक आम सवाल पूछा गया था। सामान्यतः सभी स्त्रियां घरेलू कामकाज ही करती हैं लेकिन बाहर निकलने पर एक सवाल कि बाहर निकली है तो कुछ तो करती होगी वर्ना इतना कांफिडेंस और स्मार्टनेस

नहीं बस यूँ ही पूछ लिया। हल्की झुंझलाहट साफ थी शब्दों में ...कुछ करना जरूरी है क्याबस एक लड़की हूँ यूँ कहो तो सड़क छाप दरवाजे दरवाजे घूम कर सामान बेचती हूँ।

आलोक क्या बोलते, चुपचाप कभी बाहर कभी दीक्षा की तरफ कनखियों देखते सोचने लगे कि ये लड़कियां भी न घर बाहर सब संभाल कर भी कितनी संवेदनशील होती हैं। ट्रेन का सफर तय करते समय भी अपने समय का सदुपयोग करती रहती है।

आलोक सचिवालय में बाबू थे और अक्सर अपने घर मिर्जापुर शनिवार को अपने घर आते और सोमवार को इलाहाबाद होते हुए वापस

लखनऊ। यात्रा में न जाने कितने ही लोग मिल जाते हैं लेकिन ये लड़की बिल्कुल अलग बिंदास किंतु सेंसिटिव लगी थी। क्योंकि घरेलू स्त्रियों की एक अजीब सी गंध होती है, कभी उनके कपड़ों से अँचार, मसाले या मेकअप और परफ्यूम की की तीखी गंध या फिर भारी साड़ी की गंध।

न जाने क्यूँ लड़की के बारे में जानने की उत्सुकता मन में बनी रह गई थी। संयोग है आज फिर स्टेशन पर आते ही निगाहें पूरे प्लेटफार्म पर एक बार तफरीह करने लगी थी, खैर ट्रेन आई और चल भी दी तभी भागते हुए लड़की चढ़ी और लगभग हांफती हुई निगाहें घुमाने लगी, आदतन आलोक भी खिड़की के समीप जगह ले कर बैठा था मानों प्रतीक्षारत था। दीक्षा को देखते ही बैग उठा कर गोद में रख आँखों से बैठने का आमंत्रण दे बैठा। थैंक्यूकह कर हल्का सा मुस्कुरा दी। बाइदवे मेरा नाम आलोक दूबे है और ये तो मैं पिछली मुलाकात में बात चुका हूँ कि सचिवालय में ...

बाबू हैं आप ...और हंस पड़ी वो अहा जैसे बसंत आ कर गुलमुहर की डाल हिला गया हो और गुलमुहर झरझरा कर झर उठा हो। और मैं दीक्षा सिंह, लीमिटेड कंपनी की सेल्स गर्ल, सड़क छाप लड़की। हल्की सी मुस्कान होंठों पर तैर गई थी

ऐसा न कहिए प्लीज़, आप में एक संघर्ष शील लेखक और बिंदास व्यक्तित्व छुपा है, आपसे तो बहुत कुछ सीख सकते हैं मैं तबसे लेकर आजतक यही सोच रहा हूँ कि एक लड़की कितनी भूमिकाओं को एकसाथ कुशलता पूर्वक जी लेती है।

दीक्षा आप मेरे लिए प्रेरणा है।

जी वो तो ठीक है लेकिन क्या आप मुझे खिड़की के पास बैठने देंगे।

हा हा हा पहले ही बताया होता, आइए बिल्कुल आइए।

खिड़की के पास बैठते ही एक सुकून की कोमलता उसके चेहरे पर छा गयी, मोबाइल बंद कर भागते हुए प्रकृति को मानों आँखों में भर रही थी, आँखे अधमुंदी और उसके बाल चेहरे पर फड़फड़ाते मानों नृत्य कर रहे थे, आलोक चुपचाप उसके अनुपम सौंदर्य को मानों आत्मसात कर लेना चाहते थे फिर तो मुलाकातें ट्रेन से आगे भी हुईं कितनी बार। कभी प्लेटफार्म पर ट्रेन का इंतजार

करते या कभी चाय काफी पीते हुए न जाने कितनी बातों पर डिस्कशन करते, सुझावों का आदान प्रदान और फिरवाटसेप और फेसबुक से जुड़ कर। यं तो ट्रेन के अतिरिक्त कहीं और मुलाकात संभव नहीं थी और दीक्षा? दीक्षा तो ट्रेन से उतरते ही बिल्कुल अलग लड़की नजर आती। सीधा सपाट चेहरा, झटपट भागती सी यून निकल जाती कि मन मसोस कर रह जाना पड़ता, काश कुछ देर और रुक सकती। समय बीतता गया कभी मुलाकात होती कभी नहीं, अक्सर महीने दो महीने भी मुलाकात नहीं होती। हां कभी कभी वाटसेप पर कुछ पोस्ट आदान प्रदान कर एक दूसरे की रचनाएं पढ़ने को मिल जातीं।

आज सुबह-सुबह बादल बारिश और हवाओं ने न मौसम बहुत खुशगवार बना रखा है ऐसे में मन भी कुछ बहका बहका सा है, स्टेशन पर आते ही न जाने क्यूँ आँखें फिर कुछ तलाश रही है। नहीं, आज तो बिल्कुल भी संभव नहीं है। बारिश हो रही है। डिब्बे में खिड़की के पास बैठते बगल की सीट देखी सीट तो सामने भी खाली थी लेकिन ट्रेन हिसिल पर हिसिल दिए जा रही थी मानों उसे भी किसी की प्रतीक्षा थी। तभी आसमानी साड़ी पहने कंधे पर बालों का ढीला जूड़ा जिसमे गुलाब की अधखिली कली मुस्कुरा रही थी। उफ़ आँखों में बारीक काजल और लिपिस्टिक पहली नजर में कयामत लग रही थी वो, शायद आकाश कन्या रूप धर धरती पर उतर आई है। नहीं ये वो नहीं है, नहीं ये वही हैं थोड़ी देर सांसों को संयमित करने के बाद फिर वही सीट देखना और धम्म से आ कर बगल में बैठ जाना। सीटें तो बहुत खाली थी पर तो सचिवालय के बाबू जी शायद आप कंप्यूजिया गये है। अरे मैं वहीं सड़क छाप लड़की दीक्षा हूँ।

ओ हो सचमुच तुम तो पहचान में ही नहीं आ रही हो। खैर ये बताओ इतने दिनों बाद दिखी हो, थी कहां। अरे मैं, वो मैंने काम बदल दिया है अब मैं एक स्कूल में शिक्षिका हूँ और आज मैं किसी काम से लखनऊ जाने के लिए आई हूँ।

अच्छा जी, बधाई हो कब चेंज किया जाब। बस यही एक महीने पहले, फिलहाल आज एक और इंटरव्यू के लिए लखनऊ जाना पड़ रहा है।

वाह जी, तब तो सफ़र साथ और सुंदर होगा। ये बताओ कि क्या लिख रही हो इन दिनों। बस, कभी कभी कविताएं कहानियां और संस्मरण आदि।

हूँ..मेरी तो लगभग दो पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है और एक तो आज कल में ही आ जाएगी।

वाह, ये तो बहुत खुशी की बात है, बधाई आपको।

पता है, ये सब तुम्हारी संगत और प्रेरणा से ही संभव हुआ है दीक्षा। वैसे तो मन यून ही इधर उधर अनावश्यक भटकता रहता था लेकिन जब से तुम मिली मेरी सोचने की धारा बिल्कुल बदल गई है, जो भी मन में आता है लिखता रहता हूँ, इससे मेरा वक्रत और खालीपन बिल्कुल भर सा गया है, तुम मेरी मानस गुरु हो, कह कर आलोक जी ने उसको देखा वह नजरों बाहर खिड़की से देख रही थी। जैसे कुछ सुना ही नहीं। चार महीने बाद दीक्षा तुमने अभी तक कोई किताब नहीं छपवाई। नहींहम जैसे लोगों के पास छपने के लिए मैटर तो होता है लेकिन पैसे नहीं होते। और मान लो किसी तरह छपवा भी लें तो क्या हम एक किताब लिख कर माखन लाल चतुर्वेदी बन सखते है क्या। फिर मिलेगा क्या? पैसे कहां से आएंगे दोस्त। हम औरतें जब काम करती हैं तो कुछ जिम्मेदारी और कुछ मजबूरी होती है वर्ना कौन निकलने पाता है बदिशों से बाहर। फिर किताब छपवाने के लिए एक रकम तय होती

शेष पृष्ठ 58 पर...

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली 110092



मुक्केबाज अमृता

पद्मा अग्रवाल

रियो ओलम्पिक्स में भारत को पहला
स्वर्णपदक अमृता को।।।।

विक्ट्री स्टेण्ड पर तिरंगे के साथ खड़ी अमृता के चेहरे पर केमरे के फ्लैश चमक उठे थे। उसको यह सब स्वप्नवत् सा लग रहा था। उसे अभी भी अपनी सफलता पर यकीन नहीं हो रहा था। हवा में लहराते तिरंगे झंडे पर निगाह पड़ते ही वह गर्वित हो उठी थी। उसके मन में भी देश प्रेम का जज्बा जाग उठा था, अनायास ही उसके मुंह से निकल पड़ा था, "भारत माता की जय" उसके हाथ सलामी की मुद्रा में पहुंच गये थे। उसके कोच राघव सर ने खुशी से उत्तेजित होकर भावावेश में उसे अपनी गोद में उठा लिया था। वह अनुभूति अकल्पनीय थी, उस क्षण वह निःशब्द हो चुकी थी।।।। राघव सर की अथक मेहनत के कारण ही वह सफल मुक्केबाज बन पाई थी। उसने भी उसी क्षण उनके चरणों को स्पर्श कर अपनी कृतज्ञता

जाहिर की थी। अपने गले में पहने मेडल को उसने श्रद्धापूर्वक सर के गले में पहना कर कहा, "सर, इसके असली हकदार तो आप ही हैं।" उनकी आंखों में खुशी के आंसू थे, उन्होंने अपने हाथों को उसके सिर पर रख आशीर्वाद देते हुये कहा कि तुम्हारी लगन और अथक परिश्रम का यह फल है, और मेडल उसके गले में पहना दिया था।

उसने मेडल को श्रद्धा से अपने माथे से लगा कर चूम लिया था। इस मेडल के मिलते ही वह साधारण से विशिष्ट बन बैठी थी। यद्यपि कि वह जो कल थी, वही आज भी थी परंतु उसके प्रति लोगों का नजरिया बदल गया था। सभी लोगों की दृष्टि में वह अपने प्रति सम्मान और आदर दिखाईपड़ रहा था।

सर के फोन पर बधाई संदेशों की बाढ़ सी आई हुई थी। मोबाइल की घंटी लगातार बज रही थी। वह बहुत खुश थी, वह जल्दी से जल्दी अपनी दादी और पापा से मिलना चाह

रही थी। उसकी फ्लाइट अगली रात की थी, वह जल्दी जल्दी अपना सामान बैग में भर रही थी। खुशी के अतिरेक में वह अपने मेडल को जब तब चूम लेती थी। वह अपने पापा और दादी की आंखों की खुशियों को शीघ्रतिशीघ्र देखना चाह रही थी। उसकी व्यग्रता देख सर ने अपने मोबाइल से पापा से बात करवा दी थी। उनकी आवाज सुनकर वह भावविह्वल हो उठी, उसका गला रूध गया था।

उसकी फ्लाइट लैण्ड होने वाली थी। वह अपने देश की धरती पर अपने कदम रखने वाली थी, फ्लाइट में बैठे लोग भी उसे पहचान कर बधाई दे रहे थे और सम्मान की दृष्टि से देख रहे थे।

एयर पोर्ट पर उसके स्वागत के लिये भारी भीड़ जमा थी। डोल मंजीरा, बैण्ड बाजा, भांगड़ाकरते युवक युवती सब उसके नाम की जय जयकार कर रहे थे, साथ में भारत माता की जय भी बोल रहे थे।

ऐसा स्वागत देख उसकी पलकें भीग उठीं थीं। सुरक्षाकर्मियों ने उसे भीड़ से बचाने के लिये अपने घेरे में ले लिया था। उन लोगों ने सुरक्षा



कीवजह से पीछे के मार्ग से निकालना चाहा था ,तो उसने भीड़ के अभिवादन को स्वीकार करके उन्हें धन्यवाद दिया था, फिर वह गाड़ी में बैठ गई थी।

अपने देश में इतना भव्य स्वागत होगा ,ये तो उसने स्वप्न में भी कभी नहीं सोचा था।गाड़ी में पापा को बैठा देख वह उनसे लिपट गई और फिर दोनों की आंखों से खुशी के कारण अश्रुधारा प्रवाहित हो उठी, जिसे वह चाहकर भी नहीं रोक पा रही थी।

“पापा, ये मेडल मेरा नहीं वरन, आपका है। आज जो कुछ भी मैं हूँ, वह आपकी वजह से हूँ।सब आपकी मेहनत का फल है।”

उन्होंने प्यार से उसका माथा चूम लिया था।“ मेरी बच्ची आज के सारे अखबारों की हेडलाइन में तुम्हारा ही नाम छाया हुआ है। केन्द्र सरकार 5 करोड़, राज्य सरकार 2 करोड़, एकेडमी, और खेल संगठन तुम्हारे लिये इनाम की घोषणा कर रहे हैं। न्यूज चैनल तुम्हारा इंटरव्यू दिखाना चाह रहे हैं। तुम्हारे जीवन पर डॉक्यूमेंट्री फिल्म बनाने के लिये भी मेरे पास फोन आया था।”

मात्र 20 वर्ष की उम्र में तुमने यह उपलब्धि प्राप्त की है।

उसे गांव पहुंचते पहुंचते रात के 10 बज चुके थे।वहां भी मानों पूरा गांव उसके स्वागत में फूल मालाओं के साथ पलकें बिछाये इंतजार कर रहा था। महिलायें उसे गोद में उठा कर नाच रहीं थी, उसे मालाओं से लाद दिया था।वह

थक कर निढाल हो रही थी।

दादी के हाथ का बना खाना ,इतने दिनों के बाद खाकर उसे अमृत सा लगा था। वह दादी से लिपट कर बोली कि दादी आप दुनिया में सबसे अच्छा खाना बनाती हो। दादी कौशिल्या की आंखें खुशी से भीग उठी थीं।

स्वागत सत्कार, भीड़भाड़ लंबी यात्रा के कारण वह बुरी तरह थक चुकी थी।दादी के हाथ का खाना खाकर उसका मन तृप्त हो गया था। पहले की तरह वह अपने छोटे से कमरे के बिस्तर पर लेटी तो आंखें नींद से बोझिल हो उठी थीं तभी पापा उसके कमरे में आये और उसे जागता देख उसके माथे को चूमकर आशीर्वाद देकर कहा कि बेटी आज मुझे तुम पर गर्व है। वह बहुत भावुक हो रहे थे।

आज वह निश्चित होकर गहरी नींद सोना चाह रही थी, परंतु निद्रा देवी तो सदा ही ऐसे अवसर पर रूठ कर दूर चली जाती हैं। उसका अपना कड़ुआ अतीत जब तब उसकी आंखों के सामने आकर खड़ा हो जाता है। वह चाह कर भी अपने मन के चित्रपटल से वह कटु यादें नहीं मिटा पाती ,वह उन्हीं स्मृतियों के साये में विचरण करने लगी थी।

वह पापा मम्मी के साथ रहती थी।।।दो भाई और वह , तीनों भाईबहन मिल कर खूब खेलते और लड़ाई भी करते। वह अपने भाइयों से छोटी थी लेकिन जब वह मुक्का मारती तो बड़े होते हुये भी वह रो पड़ते थे।

पापा खेत पर मजदूरी करते थे, कभी मजदूरी मिलती तो कभी नहीं मिलती।।।जिस दिन नहीं मिलती घर में खाना नहीं बनता। हम सब पंजाब के होशियारपुर के गांव में रहते थे।

पापा शराब पीते थे ,इसलिये हमेशा पैसे की तंगी बनी रहती। नशे में चूर पापा घर आते और फिर घर में मारपीट और गाली का शो हुआ करता। पड़ोसी भीड़ बनाकर खड़े हो जाते और तरह-तरह की बातें बनाते।तीनों भाई - बहन मुंह फाड़ कर जोर जोर से रोया करते। मां से बच्चे भूख से तड़पते नहीं देखे गये तो पापा की इच्छा के खिलाफ उन्होंने एक सेठ जी के दुकान में नौकरी कर ली।

अब दोनों समय पेट भर खाना मिलने लगा था, और वहां से उनके बच्चों के उतरन कपड़े भी लेकर आतीं।

पापा गुस्सैल और शक्की थे। मां के नौकरी करने के बाद दोनों के बीच झगड़े बढ़ गये क्योंकि पापा मां से पैसा झपट लेना चाहते थे और उनके चरित्र पर शक करने लगे थे।शक के कारण उनके अत्याचार मां पर बढ़ते जा रहे थे। हम तीनों भाई बहन कमरे के कोने दुबक कर फूटफूट कर सुबकते रहते। पापा मां को वह इतना मारते कि कभी उनके माथे से खून निकलता तो कभी बाल नोच कर पीटते। पापा का नशा करना बढ़ता जा रहा था , वह आधी रात को नशा करके आते और तमाशा करते। एक रात काफी देर तक पापा जब नहीं लौट कर आये तो मां ने परेशान होकर फोन किया तो



मालूम हुआ कि पापा ने नशे में किसी आदमी को चाकू मार दिया है , इसलिये पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया है । मां कमरे में बैठ कर रो रहीं थीं । घर में पूरी तरह से सन्नाटा छाया हुआ था । देर रात दादी हम सबके लिये खाना लेकर आई थीं । उन्होंने बताया कि चूँकि गोपी नशे में था ,इसलिये उसको निश्चित रूप से सजा होकर रहेगी । इसी बात पर मां और दादी के बीच बहुत देर तक झगड़ा होता रहा और फिर दादी गुस्से में रात में ही अपने घर लौट गईं पापा ने गाय पाल रखी थी । हम लोगों को दूध पीने को मिल जाता था , परंतु पापा के जेल चले जाने के बाद मां के लिये बहुत सारे काम बढ़ गये थे- गाय को चारा देना, दूध दुहना, गोबर के कंड़े बनाना, गंदगी साफ करना , एक तरफ पैसे की तंगी दूसरे तरफ काम का बोझ ,मां ने परेशान होकर गाय को बेच दिया था ।गाय के जाने के बाद हम सब देर तक रोते रहे थे ।

राज जो 10 साल का था, उसे एक गैरेज में काम सीखने के लिये लगा दिया था , वहां उसे कुछ दिनों के बाद 50 रुपये मिलने लगे । छोटा सुजान ,जो 8 साल का था , उसे किसी के घर में काम करने और वहीं रहने के लिये भेज दिया था । 7 साल की वह पढना चाहती थी, परंतु हालात ऐसे थे कि पेट भरने का इंतजाम हो जाये, इतना ही काफी था ।वह कहीं काम करने के लायक नहीं थी , इसलिये मां उसे घर के अंदर बंद करके जाया करती थीं । वह अकेले घर के अंदर गुस्से में तकिया पर मुक्के चलाया

करती ।

दिन बीत रहे थे, मां , भाई पेट भर रोटी के लिये जद्दोजहद में लगे हुये थे ।।।कभी पेट भर तो कभी भूखे सोना पड़ता । उसे पापा की बहुत याद आती थी क्योंकि वह उसे बहुत प्यार किया करते थे ।

एक दिन मां ने बताया कि तुम्हारे पापा को 5 साल की सजा हुई है ।

जब कभी वह बाहर निकलती पड़ोसी ,उन सबका मजाक बनाया करते । उसे चिढाते कि देखो देखो , इसका पापा जेल में बंद है । वह गुस्से में जोर का मुक्का मार देती फिर लड़ाई बढ़ जाती ।मां ने इस यंत्रणा से बचने के लिये उसके घर से बाहर निकलने पर प्रतिबंध लगा दिया था ।

लगभग छः महीने के बाद मां के साथ एक दिन सुखवीर अंकल आये थे । अब वह रोज आने लगे , वह अपने साथ मिठाई, समोसे, चॉकलेट जैसी चीजें लाते लेकिन उसे वह बिल्कुल भी नहीं अच्छे लगते । वह बहुत काले मोटे थे, उनकी लाल आंखें बड़ी डरावनी लगती थी ।वह उसके लिये चॉकलेट जरूर लेकर आते और अपनी गोद में बिठा कर उसके गालों पर चुम्मी की बौछार करते , साथ ही उसको मसल कर रख देते ।

मां उनके लिये पनीर की सब्जी पूड़ी बनातीं , खूब हंसहंस कर उनके साथ देर रात तक बातें करतीं रहतीं ।वह गुस्से में धधकती रहती । राज भइया भी सोने का बहाना करके उन लोगों की हरकतों पर अपनी आंख और कान

लगाये रहता ।।।उसे अंकल से इतना डर लगता कि वह कभी बाथरूम के अंदर देर तक बैठी रहती तो कभी बिस्तर के अंदर ।।।लेकिन वह तो पूरे घर में घूमने के लिये आजाद थे । वह उसे अपनी बाहों में जकड़ कर कहते कि मधु मुझे तुम्हारी अमृता बहुत प्यारी लगती है । वह कसमसा कर रह जाती लेकिन एक दिन उसने उनकी नाक पर जोर का मुक्का जड़ दिया था ,वह बिलबिला उठे थे । लेकिन मां ने आकर उसकी जमकर पिटाई की थी । वह हर पल अपने पापा को याद करती।।। वह 9 साल की हो गई थी , उसे अंकल की निगाहें और उनका स्पर्श गंदा लगता था । उनके पास एक चाभी रहती वह जब तब आ जाते थे । उसके साथ अश्लील हरकत करते और धमका कर कहते कि खबरदार यदि किसी से बताया तो तुम्हारी मां और भाई को मार डालूंगा । उन्होंने अपने पास से बड़ा सा चाकू निकाल कर भी दिखाया था । अब तो वह सचमुच में डर गई थी । वह डरी सहमी हुई अपने शरीर के साथ उनको मनमानी करने देती , मजबूरन उनका हुक्म मानकर गंदी हरकतें करती । 5-6 दिनों तक वह बिलख बिलख कर बर्दाशत करती रही, उनके हौसले बढ़ते गये और एक दिन उन्होंने उसके साथ जबर्दस्ती बलात्कार करके उसके शरीर को लहुलुहान करके रख दिया , उसने बहुत मुक्के चलाये थे लेकिन बलशाली अंकल के सामने उसका चीखना चिल्लाना कुछ काम नहीं नहीं आया और वह उसे रोज की तरह धमका कर अपने पैट के बटन बंद



करते हुये घर से चले गये थे। वह रोते रोते बेहोश सी हो रही थी। वह दर्द से बुरी तरह से बिलख बिलख कर रो रही थी।

जब मां शाम को आई तो वह उनसे लिपट कर फूट फूट कर रो पड़ी थी, 'मां, अंकल बहुत गंदे हैं, उन्होंने मेरे साथ जबर्दस्ती बलात्कार किया है।'

मां पूरी तरह से अंकल के पैसे और प्यार में डूबी हुई थीं। उन्होंने उसे धक्का देकर कहा, 'पागल हो गई हो।।।।।ऐसा कहते तुम्हें शरम नहीं आ रही।।। कहां वह और कहां तुम छोटी सी बच्ची।।।।।उसे बुरी तरह से झिड़क दिया था।

‘मैं और सुखवीर शादी करने वाले हैं।’
मां की बातें सुनकर उसका दिल टूट गया था। उसे दर्द भी बहुत हो रहा था। उसे अपने चारों तरफ घना अंधकार दिखाई पड़ रहा था। पापा को याद कर सुबक रही थी, तभी उसे दादी की याद आई थी और वह हिम्मत करके रात के अंधेरे में चुपचाप घर से निकल पड़ी थी, उस दिन अंकल नहीं आये थे तो मां ने खाना भी नहीं बनाया था। उसने झांक कर मां को देखा कि वह आंख बंद कर लेटी हुई थीं।

वह एक रिक्शे वाले की सहायता से रात के अंधेरे में दादी के पास पहुंची तो दादी समझ गई कि मां से परेशान होकर ही यह आई है।।।।।उन्होंने प्यार से गले लगा कर उसके आंसू पोछे थे। उन्होंने प्यार से अपने हाथ से खाना खिलाया और अपने से लिपटाकर सोई तो उसने सिसक सिसक कर अपनी सब आपबीती बता डाली थी। दादी ने उसके जख्मों पर

मरहम लगाया था। बरसों बाद उसे इतना प्यार और अपनत्व मिला था।

सुबह मां उसे दूढ़ती हुई आई फिर दादी के साथ उनकी जोर जोर कहा सुनी हुई, वह पैर पटकते हुये चली गई थी। मां को पूरी आजादी मिल गई थी क्योंकि राज भइया भी घर छोड़ कर कहीं चला गया था।

जब वह पूरी तरह से ठीक हो गई तो दादी ने स्कूल में उसका नाम लिखवा दिया परंतु उसके पिता के जेल

में होने की खबर वहां पहले से ही सबकी जुबान पर थी। इसलिये यहां पर भी उसे अपमान झेलना पड़ रहा था। एक तो वह दूसरे बच्चों की तुलना में उनसे उम्र में काफी बड़ी थी, इसलिये भी बच्चे उसे परेशान करते,

चिढाते, कई बार पीछे से धौल भी जमा देते। वह सब मिल कर उसे तंग करते कक्षा के बच्चों के साथ उसकी मारपीट हो जाती। वह स्कूल जाने से कतराने लगी थी लेकिन दादी का कहना मान कर स्कूल जाती। विनय उसको सबसे ज्यादा परेशान करता था, वह उसकी शक्ति से चिढने लगी थी, वह सुबह पहुंची ही थी कि विनय ने कभी उसके पीठ पर घूंसा मारता तो कभी सिर पर मारता।।।।। वह गुस्से के मारे कांप रही थी, अपने को बहुत रोकने की कोशिश करती रही लेकिन फिर वह अपने को रोक हीं पाई थी और विनय को पकड़ कर इतने मुक्के मारे कि वह हाथ जोड़ कर माफी मांगने लगा, तभी उसने

उसे छोड़ा था।

क्लास के बच्चे अब उससे डरने लगे थे। विनय के पिता स्कूल के ट्रस्टी थे, उन्होंने अपनी पहुंच दिखाते हुये उसके घर पर शिकायत भेजकर दादी को बुलवाया। उन्हें डांट कर कहा कि यदि अमृता अब किसी को भी पीटेगी तो उसका स्कूल से नाम काट दिया जायेगा।

दादी घर आकर रोने लगी थीं। यदि स्कूल से नाम काट दिया गया तो पढाई तो बंद होगी ही साथ में उनकी समाज में बहुत बदनामी होगी, वैसे ही गोपी के जेल में होने के कारण वह किसी को मुंह दिखाने के लायक नहीं है।

दादी ने प्यार से उसके सिर हाथ फेरते हुये उसे समझाया था कि मेरी प्यारी बच्ची अपने गुस्से पर काबू करना सीखो। तुम्हें भगवान् ने विशेष शक्ति, बल और खास मकसद से इस दुनिया में भेजा है। तुममें इतनी ताकत है कि अपने मुक्के से बड़े बड़े लड़कों को धूल चटा देती हो। यह तुम्हारे लिये ईश्वर का दिया हुआ वरदान है, इसको इस तरह से व्यर्थ में बरबाद मत करो।

अपने इस बल, आक्रोश, क्रोध, शक्ति, ताकत को दूसरों पर निकालने की जगह किसी सकारात्मक एवं रचनात्मक कार्य पर निकालना सीखो। तुम अपना आक्रोश, क्रोध को शब्दों के माध्यम से डायरी में लिखो। जब तुम अपनी डायरी में अपने आक्रोश या क्रोध को शब्दों के माध्यम से लिखोगी तो तुम्हारा आक्रोश एवं क्रोध का आवेग कम हो जायेगा।

दूसरी बात कि तुम्हें जिस व्यक्ति पर क्रोध आ रहा है, कॉपी में उसकी आकृति बना लो फिर उसे पेन या किसी भी तरह से उसे विकृत करो, इससे भी तुम्हारे क्रोध को निकलने का अवसर मिलेगा। इन तरीकों से तुम्हें मानसिक शांति एवं संतोष मिलेगा।

दादी ने फटे पुराने कपड़ो को इकट्ठा करके एक मजबूत पैट की मसनद टाइप बनाकर उसके अंदर भर दिया और फिर उसे छत से टांग कर लटका दिया था। उन्होंने उससे कहा था कि जब भी तुम्हें किसी पर गुस्सा आये तो उसे मारने के बजाय इस पर मार कर अपने गुस्से को बाहर निकाल दिया करो। शायद यही उसकी पहली मुक्केबाजी की प्रैक्टिस क्लास थी।

दादी के प्यार और देखभाल के कारण उसका जीवन बदल गया था। उसने किताबों से दोस्ती करना सीख लिया था। वह लाइब्रेरी से महान् पुरुषों की जीवनी लाकर पढती, जिससे उसे



मालूम हुआ था कि कलाम साहब अपने बचपन में अखबार बांटा करते थे। उसको समझ में आ गया था कि जीवन का नाम ही संघर्ष है और धैर्य ही सफलता की कुंजी है। अब वह रोज नियम से अपने मन की भावनाओं को डायरी में शब्दों के माध्यम से व्यक्त करती, उससे उसके मन को शांति मिलती।

पापा अपने अच्छे व्यवहार के कारण जेल से जल्दी छूट कर आ गये थे। वह एक साल तक सुधार गृह में रह कर आये थे। उन्होंने शराब पीनी छोड़ दी थी। अब वह बहुत शांत और बदले बदले से दिख रहे थे। वह उनसे लिपट कर फूट फूट कर रो पड़ी थी। उन्होंने उसे प्यार से गले लगाया था।

“मेरी लाडो, मुझे माफ कर दो- मेरी वजह से तुम्हें बहुत कष्ट और यंत्रणा झेलनी पड़ी।”

वह जानते थे कि उनकी तरह ही उनकी बेटी के मन में गुस्सा कूट कूट कर भरा हुआ है।

उन्होंने बचपन में उसे अपने भाइयों पर उसे मुक्का चलाते हुये देखा था। वह बड़े भाइयों को मुक्का मार मार कर उन्हें बेहाल कर देती थी। इसलिये वह अच्छी तरह जानते थे कि उसके मुक्के में बहुत ताकत है।

वह स्वयं पेशेवर मुक्केबाज बनना चाहते थे। उन्होंने बचपन से ही यह चाहा था लेकिन घर की आर्थिक स्थिति ऐसी थी कि उनका सपना, सपना ही बना रह गया था। उनकी बेटी अमृता पेशेवर मुक्केबाज बन सकती थी, यह उन्हें अच्छी तरह समझ में आ रहा था, परंतु बेटी

का चेहरा विकृत हो सकता था, इस बात को सोच कर वह मन ही मन घबरा कर पीछे हट जाते थे। एक दिन वह स्कूल से बहुत गुस्से में लौट कर आई और आते ही मसनद पर मुक्के जोर जोर मारने लगी तो उसके मुक्के की स्टाइल देख वह अपने को नहीं रोक पाये थे उसी समय उन्होंने निश्चय कर लिया कि वह उसे मुक्केबाज बना कर रहेंगे।

अगली सुबह ही वह उसे अपनी साइकिल के डंडे पर बिठा कर बॉक्सिंग क्लब लेकर गये, क्लब उसके घर से 20 किलोमीटर दूर था। वहां बॉक्सरों को रिंग में प्रैक्टिस करते देख वह भी उत्तेजित हो उठी थी। उसकी मुट्ठी स्वतः ही भिंच गई थी। वह वहां आकर बहुत रोमांचित अनुभव कर रही थी। वहां कोच ने उसका टेस्ट लिया तो उसके ऐक्शन और डेडीकेशन देख वह बोले कि आपकी बेटी में कुशल मुक्के बाज बनने के गुण हैं। कोच की बात सुनकर पापा खुश तो हुये थे परंतु फिर तुरंत घबरा कर बोले, “नहीं। नहीं।।।।।इस खेल में इसके चेहरे पर चोट लग सकती है। चेहरा खराब हो सकता है।।।।।यह खेल लड़कियों के लिये नहीं है, वरन् लड़कों के लिये है। मैं अपनी प्यारी बच्ची को घायल होते नहीं देख सकता। इसके दिमाग पर चोट लग सकती है। नहीं।।।।।।।।यह मुक्केबाजी इसके भविष्य के लिये सही नहीं है। वहीं पर वह खड़ी होकर महान् बॉक्सर

मोहम्मद अली का आदमकद चित्र देख कर मन ही मन वहां पर अपने चित्र की कल्पना

कर रही थी। उसने उसी क्षण दृढ़ निश्चय कर लिया कि उसे पेशेवर मुक्केबाज ही बनना है। परंतु मुश्किल यह थी कि पापा किसी तरह से राजी नहीं हो रहे थे। वह दादी के सामने अपनी फरियाद लेकर पहुंची थी। वह उसकी लगन और प्रतिभा के साथ साथ उसके मुक्के की ताकत को पहचानती थीं। इसलिये पापा को मजबूर होकर उसका एडमिशन बॉक्सिंग एकेडमी में करवाना पड़ा। अब तो उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया कि बेटी को उच्च श्रेणी का बॉक्सर बनाना ही है। उस दिन से उसके खान पान और फिटनेस पर पूरा ध्यान दिया जाने लगा था। परंतु कठिनाइयां तो उसके जीवन के साथ ही जुड़ी हुई थीं। साइकिल के डंडे पर बैठ कर 20 किलोमीटर रोज आना जाना बहुत बड़ी समस्या थी। दादी का ऐक्सीडेंट हो गया, उनकी पैर में फ्रैक्चर हो गया था, वह बेड पर थीं, इसलिये घर में भी कोई रहने को चाहिये था। दुःख और पेशानी के कारण पापा के कदम फिर से डगमगाये थे। लेकिन दादी ने हिम्मत नहीं हारी और अपनी एक सहेली, जो एकेडमी के पास ही रहती थी, उनके घर में ही रहने को भेज दिया। कुछ दिनों तो ठीक रहा फिर उन्हें उसका रहना अच्छा नहीं लगा तो वह अपनी एकेडमी की फ्रेंड के पास रहने लगी। यहां वहां रहने के कारण उसकी ट्रेनिंग और खाने पीने की भी समस्या खड़ी हो जाती थी। परंतु अपनी लगन और निष्ठा से वह अपने अभ्यास में दिन रात लगी रही थी।

बॉक्सिंग एकेडमी ने जब उसे पहले मुकाबले के लिये रिंग में उतारा तो पहले तो वह बहुत घबराई हुई थी क्योंकि उसी दिन उसे खबर मिली थी कि उसकी मां का हार्टफेल तीन दिन पहले हो चुका है, मां को याद कर उसकी आंखों में आंसू आ गये थे। वह थोड़ी नर्वस भी हो रही थी परंतु रिंग में अपने प्रतिद्वंदी को देखते ही सब कुछ भूल कर पंच मारने में जुट गई थी। उस दिन उसे जीतने में ज्यादा देर नहीं लगी थी। वह मुकाबला जीत गई थी। उसे ईनाम में नकद रुपया मिला, यह उसके जीवन की पहली कमाई थी। अब वह छोटी मोटी प्रतियोगितायें जीतने लगी थी। उसका नाम लोगों की जुबान पर चढ़ने लगा था। उसे आमदनी होने लगी थी। वह अपनी कमाई को पापा या दादी को दे देती। वह जानती थी कि दादी और पापा ने उसकी डूबती नैय्या को

मंझधार से निकाल कर किनारे लगाया था ।
उसके जीवन को एक लक्ष्य , उद्देश्य, दिशा
मिली थी ।

बॉक्सिंग रिंग में उतर कर मुक्केबाजी करने में
उसे बहुत मजा आता है । उसके अंदर एक
विशेष स्फूर्ति और ताकत आ जाती , उसी के
बलबूते वह अपने प्रतिद्वंदी को धूल चटा कर
ही दम लिया करती । उसका नाम , उसकी
ख्याति एकेडमी से शहर ,जिले से होती हुई
राज्य से बाहर भी पहुंचने लगी थी । उसका
नाम अखबारों की सुर्खियां में आने लगा था ।
वह देश की नामी मुक्केबाज के रूप में जानी
जाने लगी थी । समय के साथ साथ उसके मन
की कड़ुवाहट कम होने लगी थी । अब उसके
कोच उसे ओलम्पिक्स की तैयारी करवाने लगे
थे । वह ओलम्पिक्स के नाम से ही रोमांचित
हो उठी थी । उसकी लगन , परिश्रम और , रात
दिन की जो मेहनत, जुनून बन गया था । और
उसका परिणाम यह हुआ कि उसने ओलम्पिक्स
के लिये क्वालीफाई कर लिया था , अब तो
राघव सर ने अपनी जी जान लगा दिया था ।
कई बार वह घबरा कर रो पड़ती थी । लेकिन
सर ने उस पर विश्वास बनाये रखा था और
उसको प्रैक्टिस करवाते रहे थे । वह हर समय
उससे अपना सर्वश्रेष्ठ देने के लिये उत्साहित
करते । उन्होंने उसके मन में ओलम्पिक्स मेडल
जीतने के लिये जुनून पैदा कर दिया था ।
परिणाम सामने है।।।।उसे रियो ओलम्पिक्स में
गोल्ड मेडल मिल गया था ।

उसके जीवन को नई राह मिल गई थी । उसके
क्रोध, आक्रोश को रचनात्मक दिशा देने के
लिये उसकी दादी फिर पापा को है , जिनकी
वह आजीवन ऋणी रहेगी ।।।। उनकी वजह से
धन संपत्ति, यश, इज्जत , मान सम्मान क्या
नहीं मिला? वह अपने अतीत में विचरण करती
रही ओर कब सुबह हो गई , उसे पता ही नहीं
लगा था ।।।। चिड़ियों के चहचहाने के मधुर
संगीत को तो वह भूल ही चुकी थी । वह दादी
के प्यार भरे स्पर्श से अभिभूत हो उठी थी । वह
उसका माथा चूमकर बोलीं , ‘मेरी लाडो मैंने
तो तुम्हारे अंदर की ताकत को पहचाना था ,
तुम्हारी मेहनत और तुम्हारे जुनून ने तुम्हें यहां
तक पहुंचाया । मैं तो बातों में भूल ही गई
जल्दी तैयार हो जाओ, इंटरव्यू के लिये टी।वी।
वाले आ रहे होंगे

□□□

मरघट का नीम

सच
मैं रोया था
उस दिन
जब मैं रोपा गया
शमशान के एक कोने में
आवश्यकता जानकर
मैं मरते मरते कई बार जिया हूँ
जब, कोई मरा है ।
मुझे सूखता देखकर
तब मेरी जड़ों में डाला पानी
अपना कर्तव्य समझकर ।
मेरा अब तक का जीवन
सुनसान, एकाकी, उपेक्षित सा बीता
कोई नहीं आता मेरे पास
अपनी मर्जी से ।
जब कभी आदमियों का टोला
दिखाई देता आते हुए
मेरी तरफ
तब समझ आता
आज फिर कोई
विदा हुआ संसार से ।
आज सुनने को मिलेगी
जानकारी
गाँव की, शहर की,
धर्म और समाज की
आज लगेगा प्रत्येक जन
वीतरागी, ईश्वर के निकट, मोह से विहीन
क्या स्थाई रहेंगे
उनके भाव ?
यहाँ से जाने के बाद
मैं नहीं जानता ।
पर मैं आज खुश हूँ
मैंने जाना है, मैंने देखा है
दुनिया के सत्य को
सुलगती लकड़ी को, पिघलती देह को,
धधकती आग को, बुझते अंगार को,
मैंने देखा है।।।
सुदर्शन देह को
बनते राख
मैंने देखा है, बिलखते इंसान को,
कुछ देर बाद मुस्कराते हुए ।
आप बूझोगे, मैं कौन हूँ?,
मैं कोई तपस्वी या महात्मा नहीं,
पर इनसे कम भी नहीं,
मैं हूँ मरघट का नीम
हाँ, मरघट का नीम ।।

व्यग्र पाण्डे



जैसा हमारा चुनाव वैसा ही परिणाम

अपनी कंटीली और संकीर्ण सोच से
युगों युगों के लिए
शकुनि ने दुर्योधन के पूरे चरित्र को तार-तार
कर दिया,
मंथरा ने कैकयी के वर्तमान और भविष्य को
युगों युगों तक कलंकित कर दिया,
अत्यंत अनिवार्य है शुभचिंतकों का
सानिध्य,
यह बात अलग है कि कुछ रावण प्रवृत्ति के
मनुष्य विभीषण की सुंदर सोच से ताल्लुक
नहीं बनाते,
यह जीवन है यहां भांति भांति के फूल,
भांति भांति के चरित्र, भांति भांति के
व्यवहार हैं,
यहां हर व्यक्ति है आजाद
वह चाहे विभीषण को चुने,
मंथरा को चुने, शकुनि से मित्रता करें,
जैसा हमारा चुनाव, वैसा ही परिणाम
परम सत्य ये ही है
हमारी जय पराजय
दुख और सुख
सफलता असफलता
सब हमारी चयन प्रक्रिया पर
प्राप्त सानिध्य और सोच पर निर्भर है,
दुनिया तो वही है , वही है हम सब
पर हम सब कहां है एक समान।

सविता चडढा



सरहमा

किरण शुक्ल

चं

द्रकांत जी आज सुबह उठे ही थे, कि बगल का बिस्तर खाली देखकर उनका मन खिन्न हो गया था। जनाब पैंतीस सालों में ऐसा पहली बार हुआ कि उषा जी उन्हें अकेला छोड़ कर कहीं बाहर चली गई। असल में बिटिया की जचगी होने वाली थी। उसकी सास के हाथ की हड्डी टूट गई, तो होना क्या था प्लास्टर चढ़ा गया था। बेटी की परेशानी जान उषा जी अपने बेटे के साथ तुरंत चली गई। हालांकि उषा जी ने साथ चलने का बहुत इस्सरार किया लेकिन वही नहीं माने थे। उनका कहना था इतने लम्बे समय के लिए वे नहीं जाएंगे।

ऐसा नहीं था कि वे पति पत्नी कभी अलग नहीं रहे थे। चंद्रकांत जी सरकारी दौरे पर अक्सर जाते थे। तब उनका इंतजार करना उषा जी के

हिस्से आता था।

रिटायरमेंट के बाद भी लंबा समय के बीत जाने पर, ऐसा पहली बार हुआ कि उषा जी उनके बगैर कहीं दूर गईं हूँ। आज तो पहला ही दिन था और चंद्रकांत जी अकुलाने लगे थे।

घर में बहु रीना थी, जो फ्रीलांस पत्रकार थी। उनके घर का माहौल बेहद खुशनुमा था। उषा जी, बहु और चंद्रकांत जी साथ मिलकर खूब मजे करते थे। वे सोकर उठे ही थे कि बहु ने आकर चंद्रकांत जी की चाय कमरे में रख दी।

चाय पीते हुए, चंद्रकांत जी को अचानक याद आया कि रोज सुबह सैर से लौटते हुए दूध, दही, पूजा के फूल इत्यादि उषा जी ले आती थीं।

चंद्रकांत जी ने बहु को आवाज दी "रीना ! बेटा बाजार से और कुछ भी लाना है क्या?"

रीना ने मुस्कराते हुए कहा "अरे ! आप रहने दें, मैं थोड़ी देर में ले आऊंगी!"

"अरे नहीं ! मेरे रहते तुम क्यों जाओगे, उषा सुनेगी तो मुझे ही डांट लगाएगी!" चंद्रकांत जी ने चाय पी और एक थैला लेकर पास की दुकान की ओर चल दिए।

उनके लिए यह एक नया काम था। सारी उम्र सुबह की चाय के बाद वे अखबार पढ़ते थे, फिर तैयार होकर दफ्तर चले जाते। शाम को सैर के लिए पास के पार्क में जरूर जाते थे। जवानी के दिनों में जिम के शौकीन थे। बाकायदे मेंबरशिप ले रखी थी।

बाजार में कुछ बड़ा सामान खरीदने के लिए ही जाते। दूध दही सब्जी किराने का सामान, इस सब की जिम्मेदारी उषा जी के जिम्मे थी। कभी कभार वे दबी जबान से कहती तो वह बस टाल जाते थे।

आज बात कुछ और थी, उषा जी घर पर नहीं थीं और बेमन से ही सही चंद्रकांत जी ने आज यह जिम्मेदारी खुद पर ली।



चंद्रकांत पार्क की तरफ बढ़े ही थे, कि सामने दोस्तों की टोली सैर से लौट रही थी और उन्हें देखते ही बड़े जोर से ठहाका लगाकर हंसी "क्या हुआ चंद्रकांत! भाभी के जाते ही तुम्हारी ड्यूटी लग गई !"

और वह तीनों दोस्त समवेत स्वर में हंसने लगे।

चंद्रकांत जी खिसियाहट छुपाते हुए आगे बढ़ गये। दुकान पर अब थोड़ी भीड़ भी थी। उन्हें देख वहां हर आदमी थोड़ा आश्चर्य में था। "अरे आप कैसे चंद्रकांत जी! लगता है उषा जी बाहर गई हैं!"

सब को जवाब देते देते वे खीझ गए थे। तभी दुकानदार ने सामान्य तौर पर बोला "अरे अंकल! दूध चार पैकेट जाता है। आप पहली बार आए हो इसलिए पता नहीं है!"

यह सुनते ही चंद्रकांत जी का पारा चढ़ गया।

"चुप रहो! मैं जो कह रहा हूँ बस दो पैकेट दो, और यह क्या पहली बार आ रहा हूँ। पता नहीं...!!! मैं यहीं रहता हूँ!"

गुस्से में उन्होंने दो पैकेट दूध थैले में रखा और तेज कदमों से वापस लौट गए।

अभी घर के मोड़ पर पहुंचे ही कि खुदा ना खास्ता चप्पल टूट गई। बस अब तो क्या करें

वो बेहद हैरान परेशान हो गए। एक हाथ में चप्पल और दूसरे हाथ में थैला लेकर वह घर के गेट की ओर बढ़े थे, कि अखबार डालने वाले राजू की साइकिल से टकरा गए।

चंद्रकांत जी ने आव देखा ना ताव राजू को एक तमाचा जड़ दिया और आगे बढ़कर उसकी साइकिल की हवा निकाल दी। तेज स्वर में बड़बड़ाते हुए घर में दाखिल हुए।

चंद्रकांत जी को गुस्से में देख रीना की कुछ पूछने की हिम्मत नहीं पड़ी। वे सीधे अपने कमरे में चले गए।

उषा जी को गए आज दूसरा ही दिन था मगर किसी काम में उनका मन नहीं लग रहा था। यहां तक की आज उन्होंने अखबार भी न देखा। रीना के इसरार करने पर खाना भी बड़े बेमन सिखाया था। शाम को भी वे सैर के लिए भी नहीं गए।

जाने क्या सोचकर अगली सुबह वे जल्दी उठे और जैसे तैसे खुद को समझाया की जब तक उषा जी लौट कर नहीं आती उनके जिम्मे के सारे काम खुद किया करेंगे। पहले थोड़ी दूर सैर करेंगे फिर दूध इत्यादी लेकर घर आ जाएंगे।

यही सोच कर चंद्रकांत जी सुबह-सुबह तैयार

होकर बाहर निकल गए

तेज कदमों से पार्क में उन्होंने आठ दस चक्कर लगाए, फिर सड़क की तरफ चल दिए। अभी दस कदम ही चले होंगे कि अचानक आंखों के आगे अंधेरा सा छा गया जब तक वह समझते सड़क के बीच वह चक्कर खाकर गिर पड़े।

चंद्रकांत जी को जब होश आया तो उन्होंने खुद को एक क्लीनिक के बेड पर लेटे हुए पाया। पास में डॉक्टर, राजू और बेहद परेशान से रीना खड़ी थी। डॉक्टर ने बताया की अचानक बीपी बढ़ जाने के कारण वह बेहोश होकर सड़क पर गिर गए थे। राजू ने ही किसी तरह ऑटो से उन्हें क्लीनिक पहुंचाया था। बाद में रीना को भी खबर कर दी थी।

अगले तीन दिन तक वे वही एडमिट रहे इस बीच राजू सुबह शाम उनका टिफिन वगैरह लेकर आता जाता था।

चौथे दिन चंद्रकांत जी घर आ गए। इस बात की खबर उषा जी को नहीं दी गई थी। उनके घर आने के बाद भी राजू घर बाहर के सारे काम करता दिखाई देता था।

चंद्रकांत जी मन ही मन कहीं शर्मिंदा थे। उन्हें अपनी गलती का एहसास हो रहा था। उस रोज बेवजह के गुस्से में उन्होंने राजू को तमाचा मार



है तो भाई न

लघुकथा

शिवरतन ने कुछ चुनिंदा लोगों के लिए मछली भात का प्रोग्राम रखा। संयोग से उन चुनिंदा जनों में मैं भी शामिल था। दस बारह लोगों को खिलाने में मुझे पूरा यकीन है कि उसकी दो दिन की दिहाड़ी खर्च हो गयी होगी।

खाने की पाँत पर बैठते ही एक शख्स ने कहा, 'कुछ लिक्विड की व्यवस्था होती साथ में तो मछली खाने का मजा आ जाता।'

शिवरतन झट से एक पाँच लीटर का डिब्बा उठा लाया। बोला, 'सबेरे-सबेरे ही ताजपुर से पाँच लीटर महुआ उठा लाया हूँ।'

थोड़ी ही देर में वातावरण मछली और महुए की महक से गुलजार हो गया।

खाते-खाते मैंने पूछा, 'शिवरतन तुमने बताया नहीं, आखिर ये भोज किस खुशी में?'

शिवरतन बोला, 'भतीजा हुआ है। मेरा जो छोटका भाई है न, डोमन उसको तीन लड़की के बाद भगवान ने लड़का दिया है।'

मैंने विस्मय से कहा, 'लेकिन उससे तो तुम्हारी लड़ाई है। वो तुमसे अलग है। सुना है बातचीत भी बंद है तुम दोनों में।'

शिवरतन बोला, 'ठीक सुने हैं मालिका। हमारी आपस में ताकातकी तक नहीं।'

मैंने पूछा, 'तो ऐसे भाई के घर बेटा होने पर तुम काहे उतावले होकर खर्च कर बैठे? दो दिन की मजदूरी उड़ा बैठे मछली भात पर।'

शिवरतन ने एकदम निर्दोष सा जवाब दिया, 'कुछो हो मालिक, ससुरा है तो मेरा भाई ना।'

दीपक कुमार

दिया। आज वही राजू पूरी जी जान से उनकी सेवा में लगा है।

लगभग एक हफ्ते बाद चंद्रकांत जी बरामदे में बैठे थे। तभी राजू आता दिखाई दिया उन्होंने बड़े प्यार से राजू को बुलाया और पूछा "अखबार डालने से आखिर कितने पैसे मिल जाते हैं?"

राजू अचानक रुक गया फिर धीरे से बोला "अंकल ! मुझे अखबार डालने से तो थोड़े से पैसे मिलते हैं, लेकिन उसके बाद मैं लोगों के घर में खाना भी बनाता हूँ। आपकी सोसाइटी के लोगों के छोटे बड़े छुटपुट काम भी करता हूँ।" लोग थोड़े बहुत पैसे देते रहते हैं।

फिर चंद्रकांत जी को देखते हुए बोला "असल में मैं इंटर की तैयारी कर रहा हूँ।" वह जिस रोज आपने मुझे मारा था ना! मैं बहु जी के लिए पूजा के फूल आया था। आंटी जी चली गई थी। मुझे पता था इसलिए मैं खुद ले आया था। उस रोज मेरी कोई गलती नहीं थी।

असल में मेरी साइकिल का ब्रेक भी खराब है, वह बहुत पुरानी पापा की साइकिल है। पापा तो हैं नहीं बस वही एक उनकी निशानी है। उसे ठीक कराने के लिए पैसे भी नहीं हैं।"

आज चंद्रकांत जी के प्यार से पूछने की वजह से शायद उस चांटे का दर्द उभर आया था। यह सब कहते हुए राजू बड़ा मायूस सा दिख रहा था। चंद्रकांत जी कुछ क्षण चुप रहे फिर बोले "तू मेरे घर में काम करेगा...! अखबार फेंक

कर इतना थक जाएगा तो पढ़ेगा कैसे !"

"वह काम किसी और जरूरतमंद आदमी को दे दे। मैं तुझे पढ़ाया करूंगा, बाकी लोगों के घर का काम निबटा कर तू सीधे यहां आ जाया कर। फिर मैं तुझे पढ़ाऊंगा भी और यहां के काम के पैसे यानी तनखाह भी अलग से दूंगा!"

"और हां अगर मेहनत से पढ़ लिया ना, तो आगे भी पढ़ाऊंगा!" राजू के चेहरे पर एक सुखद आश्चर्य सा आ गया था।

वह आंखों में आश्चर्य लिए चंद्रकांत जी का चेहरा देख रहा था। वे कुछ बोले नहीं और उठकर अपने कमरे की तरफ जाने लगे, तभी जैसे उन्हें कुछ याद आया तो मुड़कर बोले "सुन गैराज में एक साइकिल पड़ी है, कभी मेरा बेटा उसे चलाता था, एक्सरसाइज करने के नाम पर...। अब बेकार वहीं खड़ी धूल खा रही है।"

फिर जब से सौ रुपए निकालकर चंद्रकांत जी ने राजू की तरफ बढ़ाए "यह पैसे ले और जाकर साइकिल में हवा पानी ठीक करा ला, उसे तू इस्तेमाल कर!"

चंद्रकांत जी ने मुस्कुराकर राजू के सर पर हाथ फेरा। राजू मुस्कुरा रहा था, मगर अब उसकी आंखों में नमी भी थी...। शायद उस रोज लगे चांटे के जख्मों पर आज मरहम लग गई थी।





कहानी

श्यामल बिहारी महतो

ब

जरंग चौक पर पहुंचा तो सामने से शिखर बाबू को लंबे लंबे डेग बढ़ाते आते हुए देखा। तभी बीमा एजेंट कैलाश पीछे से आकर बाइक पर बैठ गया और बोला "चलो।।।।"

मेरा ध्यान अब भी शिखर बाबू पर अटका हुआ था। उसकी और उसकी जिंदगी की चाल को मैं आज तक समझ नहीं पाया था। उसके जीवन की पगडंडियां इतनी उलझी और टेढ़ी-मेढ़ी थी कि उसको जानने का इच्छुक व्यक्ति भी उलझ कर रह जाता। लोगों ने जब भी उसे देखा, कभी पैदल, तो कभी साइकिल पर, तो कभी बाइक से आ रहा है तो कभी चार पहिया वाहन उड़ाता चला आ रहा है, और अगले ही दिन किसी की साइकिल के पीछे कैरियर पर बैठा चला आ रहा है। ताज्जुब तो तब होता

मुंह से बात निकल जाती थी "यह किस तरह का आदमी है भाई! साधन संपन्न और सब कुछ उपलब्ध रहते हुए भी लगता कुछ नहीं है इसके पास! ऐसों का यह हाल तो तंग हालों का क्या हाल होगा।।।।।"

ऐसे सवाल जब भी शिखर बाबू से टकराता जवाब उसकी जब से निकलता "पैदल चलने से शरीर में पावर बढ़ता है और उम्र लंबी होती है।।।।"

"ऐसी बात है तो दूसरों की गाड़ियों के पीछे लटक क्यों जाता है।।।?" कोई मुंह पर ही कह देता, तब वह दूसरी तरफ मुंह घूमा लेता था। आदमी जब जीवन के खेल में उलझ जाता है तो उसकी एक चाल सही पड़ता है तो कई चालें उसकी उलटी पलटी पड़ जाती हैं। शिखर बाबू के साथ यही कुछ हो रहा था।।।।

"अरे, चलो भी।।।।।" पीछे बैठे कैलाश ने फिर कोचा था मुझे।

"चलता हूं न यार, देख नहीं रहा है, सामने से

शिखर बाबू आ रहा है।।।।"

"तो क्या उसे माथे पर बिठाने का इरादा है- बिठा लो।।।।।" कैलाश जैसे कुढ़ा था।

"जानते हो, कल क्या हुआ इसके साथ, बहुत बुरा हुआ।।।।। ऐसा तो किसी दुश्मन के साथ भी नहीं होना चाहिए!"

"मुझे ऐसे ढोंगी, नीच विचार और मन के मैले आदमी की किताब पढ़ने में जरा भी दिलचस्पी नहीं रहता है, अब चलो भी।।।।।"

"अरे, पहले सुनो तो- " मैंने बाइक आगे बढ़ाते हुए कहा " किसी के प्रति इतनी जल्दी राय बना लेना- मैं समझता हूं गलत है। पहले लोगों को जान लेना, समझ लेना सरसरी तौर पर बेहद जरूरी होता है, खास कर शिखर बाबू जैसे लोगों के बारे में।।।।।"

"ठीक है, सुनाओ।।।।।"

"सुबह का दस बज रहा था। ऑफिस का समय था। मैं दुलरिया महतवान के विधवा पेंशन काम को जल्दी जल्दी पूरा करने में लगा था



ताकि आज के डाक के साथ उसे एरिया ऑफिस भेज सकूँ। परन्तु उसे लेकर जाने वाला पियून पूरा का अभी तक कोई पता नहीं था। उसकी पीने की आदत ने फिर जोर पकड़ लिया था। कई बार उसे आवाज दे चुका हूँ परन्तु अभी तक आया नहीं था। बहुत बार उसे कह भी चुका हूँ कि अरे, कम पिया करो, ऐसा न हो कि तुम्हारी पत्नी के नाम फैमिली पेंशन मुझे ही भरना पड़े! जवाब भी उसका लाजवाब होता "उसे अपने पास ही रख लीजिएगा, भैया!"

काम का मूड बना ही रहा था कि नीचे से आरती की चीखने की आवाज ने चौंका दिया। मैं काम छोड़ सीढ़ियों को नापते हुए नीचे उतरा। देखा शिखर बाबू बड़ी तेजी से अपने ऑफिस से बाहर निकल रहा था। उसे जब भी देखा तेज रफ्तार में ही देखा। मामला पैसे कमाने का हो या फिर पैदल राह नापने का। इस वक्त वह काफी गुस्से में लग रहा था, जैसे हवन में बैठा हो और किसी ने उस पर पानी डाल दिया हो। बाहर फोन पर वह किसी से बात करने लगा था। चेहरे से खासा परेशान भी लग रहा था। तभी बात कर वह पुनः अपनी टेबल पर लौट आया था। चेहरे पर परेशानी चिपक सी गई थी। दरअसल कभी मैंने उसे हंसते हुए भी आज तक नहीं देखा था। जब भी देखा उदासी की चादर

ओढ़े हुए पाया। सच मानो, रूपये बनाने के फेर में जो एक बार पड़ जाए, जीवन भर का वह हंसना भूल जाता है। शिखर बाबू पर यह बात हर कोण से सटीक बैठती थी।

आरती के साथ शिखर बाबू का कांव कांव फिर शुरू हो गया था। शिखर बाबू कभी अपनी टेबल पर फटी बिल सीट को देखता तो कभी आंख चढ़ाए खड़ी आरती को। दोनों का कोई मेल नहीं। दोनों के दो चेहरे, दो सारूप। एक नागिन तो दूजा सपेरा।

"तुम्हारी यह हिम्मत, तुम खुद को समझती क्या हो, तुम्हें छोड़ूंगा नहीं, इसकी सजा जरूर मिलेगी" शिखर बाबू का सिर से पांव तक गरम था।

"और तुमने मेरे साथ जो किया, उसकी कोई सजा नहीं? मैं पीओ तक जाऊंगी!!" आरती भी अपने में अड़ी रही।

कैसी लबाइनों की तरह चीख रही है यह औरत! आश्चर्य! बोल बदल नहीं सकती, कम से कम आवाज तो कम कर दो, उल्टे आंखें लाल किये हुए थी। आरती को पहली बार मैं इस रूप में देख रहा था और मैं हैरान भी था। आखिर इस लड़ाई की जड़ में कौन सा खर पतवार उग आया था कि आरती जैसी

एक संस्कारी औरत को अगिया बताल का रूप धारण करने पर मजबूर कर दिया था, शिखर बाबू ने।

शिखर बाबू सांप की तरह सरकता हुआ फिर बाहर निकल आया था और फिर किसी से फोन पर बातें करने लगा।

नित्य नियम नीति और जनऊ धारण कर पूजा पाठ करने वाला शिखर बाबू ने यह कभी सपने में भी नहीं सोचा होगा कि जीवन में कभी ऐसे भी मोड़ आएंगे जब उनका सामना किसी अबला से होगी और इस तरह से होगी कि खुद का तमाशा बन जाए। शुरू के दिनों में वह खूब हनुमान चालीसा पढा करता और बात बात में चुटकी बजाया करता था। फिर अचानक न जाने क्या हुआ कि दो साल पहले वह खुद को गायत्री परिवार से जोड़ लिया। उस दिन से शिखर बाबू हर दिन ऑफिस पहुंच पहले केवड़ा अगरबत्ती जलाता, आंख मूंद उसे पांच फेर घुमाता और दीवार पर टंगी विवेकानंद की तस्वीर के नीचे अगरबत्ती खोंस कर जोर जोर से गायत्री मंत्र का उच्चारण करने लगता और अंत में पुनः दो तीन बार हाथ से चुटकी बजाता, चुटकी बजाना वह भूला नहीं था और जो सामने होता उन्हें गायत्री महिमा सुनाने लगता था। इस पर कोई उसी का नकल करते



हुए चुटकी बजाता और हनुमान चालीसा का कोई पद पढ़ते हुए चला जाता। यह देख शिखर बाबू अंदर से कूढ़ उठता था।

हनुमान चालीसा से गायत्री मंत्र वाहक में बदलाव शिखर बाबू में अकस्मात नहीं हुआ था। अकस्मात कुछ होता भी नहीं है। हर बदलाव के पीछे कोई न कोई कहानी होती है। लेकिन शिखर बाबू के पीछे तो एक नहीं बल्कि कई कहानियां थीं, जैसे किसी किसी मर्द की एक नहीं, कई जनानियां (औरतें) होती हैं।

अन्य बाबूओं जैसा ही शिखर बाबू भी ऑफिस का एक बाबू ही था। लेकिन बाबू का मतलब "बहुत बड़ा बाबू" होता है जैसे थाने का बड़ा बाबू ! यह बात सिर्फ शिखर बाबू ही समझ पाया था।

ऑफिस में वह टाइम रेटेड बिल बाबू के ओहदे पर डिपूट था। लेकिन जमींदार के मुनीम की तरह वह मजदूरों से पेश आता था। हर काम के लिए उसने सेवा शुल्क निर्धारित कर रखा था। लेन देन का उसका अंदाज भी निराला था। मजदूरों से सीधे कहने की बजाय अपना दांयी हाथ मुंह के सामने लाकर एक विशेष अंदाज में तीन बार चुटकी बजाता, फिर भी जो मजदूर उसके इशारे को नहीं समझ पाता या न समझने जैसा भाव प्रकट करता तो शिखर बाबू कुहक कर बोल उठता " अरे भाई, चाय - पान के

लिए ही मांग रहा हूं, दोगे तो दनादन काम होगा।।। "

"आर, सरकार जो तनख्वाह देती है, उसका क्या ? लूट कर यह सब कहां रखोगे।।?" कोई कह उठता।

"इसे लूटना कहते है।।? ठीक है जाओ, सौ की जगह दौ सौ देकर जाओगे।।। " शिखर बाबू धामन सांप जैसा फुफकार उठता था।

विवाद और गालियां! शिखर बाबू के लिए कोई नया नहीं था। बल्कि कहूं तो इन दोनों से उसका चोली दामन का सा नाता रहा है। जिस टेबुल में गया, पैसे कम गालियां ज्यादा खाई उसने।

टाइम रेटेड बिल बाबू से पहले वह पेंशन बाबू हुआ करता था। यहां भी उसकी कारगुजारियां कमाल की थी। उसके काम काज से तंग आ चुके कई मजदूरों के कम्पलेन पर्सनल मैनेजर के पास विचाराधीन पड़े हुए थे। उसी में एक कम्पलेन विधवा बुंदिया देवी का भी था। तीन साल पहले काम के एवज में बुंदिया से बतौर रिश्तत तीन हजार रुपए लेकर भी शिखर बाबू ने उसका फैमिली पेंशन वाला काम नहीं किया था। इस बात को लेकर जब भी वह शिखर बाबू से कहने आती तो पता चलता, शिखर बाबू गायत्री परिवार की यज्ञ में शामिल होने हरिद्वार गया हुआ है तो कभी

हरियाणा जाने की बात सुनती और निराश होकर लौट जाती थी। ऑफिस का चक्कर लगा लगा कर बुंदिया को अब चक्कर आने लगा था, शिखर बाबू की प्रति मन में भी विरोध का भाव उत्पन्न होने लगा था। जो कभी भी सुतरी बम जैसा फट सकता था। इसी बीच शिखर बाबू से उसकी मुलाकात हो जाती है। तब यही शिखर बाबू अनेक देवी देवताओं की कसमें खाकर बुंदिया को यह यकीन दिलाने में कामयाब हो जाता है कि उसका काम हो रहा है और बहुत जल्द उसका विधवा पेंशन चालू हो जाएगा और एरियर का पैसा भी बैंक खाते में पहुंच जाएगा। लेकिन ऐसा होता नहीं। बुंदिया के साथ यह महज़ एक छलावा था। बुंदिया गौ माता जैसी एक ग्रामीण विधवा थी, विधाता से बढ़कर उसने शिखर बाबू पर भरोसा की थी। उस शिखर बाबू पर जो सज्जनता की पीला गमछा ओढ़े विधवाओं की कामुकता पर रिसर्च करते कई बार देखा गया था। बुंदिया देवी जिसे शिखर बाबू बुड़बक समझ रहा था, पर वास्तव में वह बुड़बक थी नहीं, बस मुंह बिगाड़ना नहीं चाहती थी। आज भी गांव में छोट-बोड़, ससुर भैंसुर जैसे रिश्तों का बड़ा सम्मान दिया जाता है। लेकिन शिखर बाबू की कुण्डली में रिश्तों का नहीं रूपयों का महत्व था। बर्दास्त न हो तो कभी कभी गूंगा का भी मुंह खुल जाता है। परेशान बुंदिया देवी का मामला खरगोश की भांति उछलता एक दिन युवा मजदूर नेता जगतलाल के पास पहुंच गया। दूसरे दिन ही जगतलाल शिखर बाबू के सिर पर सवार हो सवाल करते देखा गया " बुंदिया का काम आज तक क्यों नहीं हुआ? किस काम के एवज में इससे तीन हजार रुपए लिया है।।?"

" मैंने इससे कोई पैसे नहीं लिए है वो झूठ बोल रही है।।!"

" अच्छा।।!" जगतलाल ने कहा और माथा झुका के शिखर बाबू की पीठ पर तीन जोरदार मुक्के जड़ दिया था।

" इस तरह की मुक्कों से देह और मजबूत होती है! " भीड़ से निकल कर किसी ने कहा था।

" सुधर जाओ, सप्ताह दिन के अंदर इसका काम हो जाना चाहिए, वरना तुम्हारी खैर नहीं।।!" और जगतलाल चला गया था।

उसके बाद ही पेंशन विभाग से उठा कर शिखर बाबू को सीधे बिल विभाग में पटक दिया गया

था। जहां हर काम के लिए सेवा शुल्क निर्धारित कर वह गायत्री मंत्र की तरह जाप करते रहता था।

यदि उसकी पूजा पाठ की ही बात करें तो वह ऐसी नीच विचार का नहीं हो सकता था लेकिन सच यह था कि वह रिश्तत लेता था, रिश्तत खाता था, रिश्तत सोता था और रिश्तत पादता भी था- शिखर बाबू !

लेकिन कल आरती के सामने शिखर बाबू ने पादा ही नहीं हग भी दिया था और उसकी गंध से सारा ऑफिस गमक - गंधा उठा था । तभी बहुतों ने जान पाया की शिखर बाबू कमीशन पर एक बीमा एजेंट के लिए साइड एजेंट का भी काम करता है और यह काम उसने बिल विभाग में आने के बाद से ही शुरू कर दिया था। जिन मजदूरों के वह बिल बनाता था उन पर किसी न किसी रूप में दबाव तब तक बनाए रखता था जब तक उससे एक बीमा पॉलिसी पर हस्ताक्षर न करवा लें । लेकिन पिछले छः माह से उसे एक भी पॉलिसी हाथ नहीं लगा था। फिर वह अचानक और रहस्यमय ढंग से चुप लगा गया था। जैसे कोई पुरानी बस फेफाते फेफाते अचानक से बंद हो जाती है।

हर दिन की तरह कल भी शिखर बाबू कछुआ चाल से ऑफिस पहुंचा था और हर दिन की तरह ही अगरबत्ती जलाई और गायत्री मंत्र कुछ



देर जोर जोर से पढ़ा फिर बैठ कर अपने काम पर लग गया। निखिल बाबू ने नित्य की भांति एक बार उसे देखा और मुस्कुरा कर अपने काम पर मशगूल हो गया।

भुगतान हेतु जाने वाला बिल सीट शिखर बाबू की टेबुल पर कल से पड़ा हुआ था। उसे वह फाइनल रूप से चेक करने में लग गया था। तभी -

" आ गया ढोंगी बाबू ! बहुत से बाबुओं को देखा, पर तुझ जैसा कमाई कटवा बाबू आज तक नहीं देखा, लेकिन मैं बिसनी नहीं हूँ और न उसकी जैसी कमाई कट जाने के बाद चुप बैठने वाली हूँ मैं!!"

मैनेजर ऑफिस से निकल कर आरती ने सीधे शिखर बाबू पर हमला कर दिया । शिखर बाबू ने मुंह नहीं खोला। आरती पर सिर्फ नजर भर डाली और अपना काम करता रहा। हर हालत में बिल आज उसे एरिया ऑफिस में भेजना था ।

"हमको लोकल सेल की कामिन समझ लिया, जो चाहे मन वो मेरे साथ करोगे? बिल बाबू हो, बिल बाबू ही रहो, मेरा मालिक

बनने की सोचना भी नहीं!!!" अब आरती शिखर बाबू के ठीक सामने खड़ी थी" धूप अगरबत्ती जला कर तुम दुनिया को धोखा दे सकते हो - आरती को नहीं, इसी टेबुल पर कामता बाबू को काम करते देख चुकी हूँ। कभी किसी से चाय पान के लिए भी एक धेला नहीं लिया। मजदूरों के बीच कितनी इज्जत थी उनकी, लेकिन तुझे जैसा लालची इज्जत का मरम क्या जाने। कल का ड्राम ठेलने वाला, आज कुर्सी मिल गई तो बड़ा बाबू बनता है। कह देती हूँ, हमारे रास्ते मत आओ, वरना पानी उतार दूंगी!!!"

आरती की चीखती तेज आवाज ने अगल बगल काम करने वालों चौंकाया था। बात क्या है? यह जानने के लिए लोग जमा होने लगे थे। शिखर बाबू अब भी बिल सीट पर मूड़ी गड़ाए हुए था। कोई प्रतिक्रिया नहीं, कोई जबाव नहीं। जैसे मामला उनसे नहीं किसी और से जुड़ा हुआ हो ।

आरती ने भीड़ की तरफ मुड़ी घुमाई और मुंह फाड़ दिया -" शायद आप लोग इस ढोंगी बाबू का असली रूप नहीं देखे हैं, इनकी कालू करतूतों से अवगत नहीं हो, तो सुनें - " एक

आरती की चीखती तेज आवाज ने अगल बगल काम करने वालों चौंकाया था। बात क्या है? यह जानने के लिए लोग जमा होने लगे थे। शिखर बाबू अब भी बिल सीट पर मूड़ी गड़ाए हुए था। कोई प्रतिक्रिया नहीं, कोई जबाव नहीं। जैसे मामला उनसे नहीं किसी और से जुड़ा हुआ हो ।



बीमा पॉलिसी दे दो " कह कह कर पिछले छः माह से मुझे परेशान कर रखा है। हमारा परिवार बड़ा है। खर्च बहुत है। पैसे बचेंगे तभी तो पॉलिसी -ओलोसी के बारे में सोचूंगी। हमने साफ मना कर दिया- नहीं दे सकती हूं। बस इसको गुस्सा आ गया, इस माह मेरा दो दिन का हाजरी छोड़ दिया, पूछा तो कहता है, गलती से छूट गया। मैं पूछती हूं छूटता तो सभी ने छूटता, दो ही दिन क्यों ॥?

भीड़ ने आरती का समर्थन किया " ठीक कहती है, ऐसा तो नहीं होना चाहिए था!!!"

आरती आग उगलती रही " अब कहता है, अगले माह एरियर बना कर दे दूंगा।, मैं कहती हूं, इस माह की कमाई अगले माह क्यों ? इसी माह देना होगा-चाहे जैसे दो। बाप थूक से सत्तू सानता था, बेटा मूत से गाड़ी चलाना चाहता है!! " आरती शिखर बाबू की औकात बताने उतर गई थी।

इस बीच शिखर बाबू फिर छिपकली की तरह बाहर निकला और तुरंत वापस भी आ बैठा।

" देखने से शिखर बाबू ऐसा करेगा, लगता तो नहीं है, उसकी बातों से तो साधू टपकता है, हमेशा धरम-करम की ही बातें करता है ॥ " किसी ने बात रखी थी।

आरती ने बात लपक ली" तब आप इसे नहीं जानते हैं, पक्का रंगा सियार है, दिखता कुछ

है, करता कुछ है, हमने समझा था, मजदूर का बेटा है, हमारी मजबूरीयों को समझेगा लेकिन यह तो सबको परेशान कर रखा है, रूला कर रखा है। बाबुओं के भी बाप निकला!!!!"

आरती आज रूकने वाली नहीं थी। बेहद गुस्से में थी। बहुत गुस्से में। गुस्सा उसके तन बदन पर चिपक सी गई थी और वह आक्रामक हो उठी थी। यह देख ऑफिस के सामने अच्छी खासी भीड़ इकट्ठा हो गयी थी और आरती आपसे बाहर हो गई थी " आप लोगों को नहीं मालूम, मैं इसके बाप को भी जानती हूं। वह कभी हमारा दंगल सरदार हुआ करता था, पर था एक नम्बर का कंजूस भी। अपने मलकटा जीवन में बाहर न कभी किसी होटल में चाय पी थी और न कभी सिंघाड़ा - चोप ही खाया। दो मडूआ रोटी खाकर पूरा दिन गुजार देता था। घर में इसे सगे मां बाप को दाल भात खिलाने में दिक्कत है लेकिन ऑफिस में स्वामी जी के जन्म दिन पर लोगों को खीर पुड़ी खिलाता है, जानते हो क्यों? ताकि लोग इसकी कुकर्मा की चर्चा न करें। ऐसा तो है यह। मेरा बड़ा बेटा जीवित होता तो आज इसी की उम्र का होता!!!!" कहते कहते आरती फफक कर रो पड़ी थी।

" शिखर बाबू ने आरती के साथ अच्छा नहीं किया!!!" भीड़ से किसी ने फिर कहा।

" विधवा और विधाता से डरना चाहिए!!" दूसरे ने जोड़ा था।

लोगों का मत और साथ आरती के साथ हो गया था। फिर भी आरती सहज नहीं हो पा रही थी। बात दो दिन की हाजरी की नहीं थी। बात थी, शिखर बाबू की मनमानी की, उसके बाबू होने की अहम की। जिसे सबक सिखाना जरूरी था। तभी किसी काम से कामनी देवी ऑफिस पहुंची थी। पूछ बैठी "क्या हुआ आरती ? बहुत गुस्से में दिख रही है।?"

"अरे, होना क्या, तुम्हारी तरह ही इस बेलुराहा ने अबकी मेरा भी दो दिन की हाजरी छोड़ दिया है!!"

"इस आदमी का कोई इलाज नहीं है।?" कामनी बोली

"है क्यों नहीं!!!" इतना कह आरती ने लपक कर शिखर बाबू के सामने से बिल सीट उठा ली, इससे पहले कि शिखर बाबू कुछ कर पाता, कामनी के सहयोग से उसे " फर्ररर।।।अ" की आवाज के साथ दो हिस्सों में फाड़ दी। बोली "लो कर लो पेमेंट ॥!" और दोनों ऑफिस से एक साथ बाहर निकल गयी। आरती का चेहरा तनाव मुक्त था।।।



भ्रमरनासाहत

“

बस-बस! यहीं रोक दीजिए, सर!”

“अंधेरे जनविहीन वन के निकट कैसे छोड़ूँ?”

“सर! पानी में भीगता देख आपने मुझे जिस जगह से लिफ्ट दी था, अक्सर वहीं से लिफ्ट लेकर इसी जगह पर उतरती रही हूँ”, मोहिनी सूत वाली पढ़ी-लिखी जान पड़ती स्मार्ट लड़की ने रहस्यमयी ढंग से कहा।

“यहाँ उतरने की कोई खास वजह?”

“आपके फोन कॉल्स से जाना कि आप नए जन्मे हाईवे गैंग की तलाश में हैं, जो मुसाफिरों से ठगी और छिनतई करता है।”

“हाँ! थानाध्यक्ष रूप में मेरी हालिया नियुक्ति हुई है और यही पहला केस मिला है। कुछ जानती हो तो बताओ। सूचना देने वाले को भारी इनाम मिलेगा।”

“क्या आपने केस फाइल ठीक से पढ़ी नहीं सर? पढ़ते तो जानते कि सरगना एक लड़की है।”

“सरसरी निगाहें डाली थीं, पर अधिक विचारे बिना सर्वप्रथम क्षेत्र का निरीक्षण करने निकल पड़ा।”

“हम सारे प्रशिक्षित पेशेवर थे सर! कोरोना ने हमारी नौकरियाँ और कई परिवारजन छीन लिए। मंदिर, मस्जिद, जाति, धर्म पर वाद-विवाद का क्या लाभ? हम युवाओं को चाहिए काम और आर्थिक संबल, तभी परिवारजनों की आवश्यकताएँ पूरी कर पाएँगे। वैसे मैंने गैंग को अबतक सचेत कर दिया है। कोई सामने न आएगा”, चेहरे पर एक विजयी मुस्कान खेल गई।

“तुम्हें पकड़ा तो एक-एक करके सब धरे जाएँगे”, युवा थानाध्यक्ष कब चुप रहने वाले थे।

“आसान नहीं होगा, सर! मुझे पकड़ा तो हो हल्ला मचाना शुरू कर दूँगी कि अपराधियों का कोई सुराग न मिला तो एक मासूम को ही धर लिया।”

“इस वीराने में तुम्हें सुनेगा कौन?”

“मेरे इशारा करने भर की देर है, सर। पर हाँ, आपके भद्र व्यवहार की कायल हो गई हूँ। जोखिम भरे काम से थककर अन्य काम की सोच भी रही थी।।। मेरे विलग होते ही साथी स्वतः बिखर जाएँगे।”

साफगोई से प्रभावित थानाध्यक्ष ने सोचा, “सरगना का चेहरा देख ही लिया है। विश्वास करने के अलावा चारा भी नहीं है। नौसिखिएने, जोश तथा हड़बड़ी में सर्विस रिवाल्वर थाने की दराज में ही छोड़ आया। इधर न तो लड़की निहत्थी होगी, न ही इसके छिपे हुए साथी।।। मेरी स्थिति भाँपकर ही इतनी बातें बताई होंगी उसने।।।”

लड़की संतुलित कदमों से वन में विलीन हो गई और थानाध्यक्ष ऊजबक की तरह देखता रह गया।

नीना सिन्हा



बच्चों की पहेलियाँ

पेट जिसका गोल
चमड़े वाला खोल
वो बजे तो नाचे लोग
घेरा जिसका गोल
उसको क्या कहते
बिट्टू बोल-बोल बोल?
उत्तर-ढोल

शीर्षक दूल्हा बंदर बैठा उदास

बंदर ने जब ब्याह रचाया।
लाल रंग का कोट सिलाया।
जंगल सारा खूब सजाया,
जगह-जगह पर द्वार बनाया।

सारे रस्ते फूल बिछाये,
दूर शहर से बैड मँगाये
सारे बंदर झूम रहे थे,
इधर-उधर वे घूम रहे थे।

स्टेज सजा था झूलों वाला,
अमलताश के फूलों वाला
पार्तिर से सज-धज कर आई,
वधु बंदरिया सबको भाई।

होने वाली थी वर माला,
बदल गया पर सारा पाला।
राज किसी ने ऐसा खोला
बंदर अनपढ़ कोई बोला।

तुरंत बंदरिया तमक गई,
वो दादा सन्मुख धमक गई।
अनपढ़ से ना ब्याह करूँगी,
पढे-लिखे का वरण करूँगी।

दूल्हा बंदर बैठा उदास
सोचे हाय मैं पढ़ता काश!

आशा पांडेय ओझा

मैं आज हूँ
कल नहीं रहूँगा!
मैं जानता हूँ
अपनी नियति, कि तुम
आज तो मुझे अपनाओगे
पर कल फेंक दोगे!
लेकिन फिर भी मैं
हर रोज अुंगा!
तुम्हें अपनी खुशबू से
महकाने के लिए!!
सोनल मंजू श्री ओमर राजकोट,
गुजरात
शीर्षक - इंतजार तुम्हारा
संवेदनशील लोग भी
वक्त और हालात के थपेड़ों से
पत्थर बन जाते है।

जो आँखे

वजह-बेवजह रो दिया करती थी
वो भी शुष्क हो जाती है।

इन्हें क्या चाहिए.....

संतोष भरी झपकी,

अपनेपन की थपकी

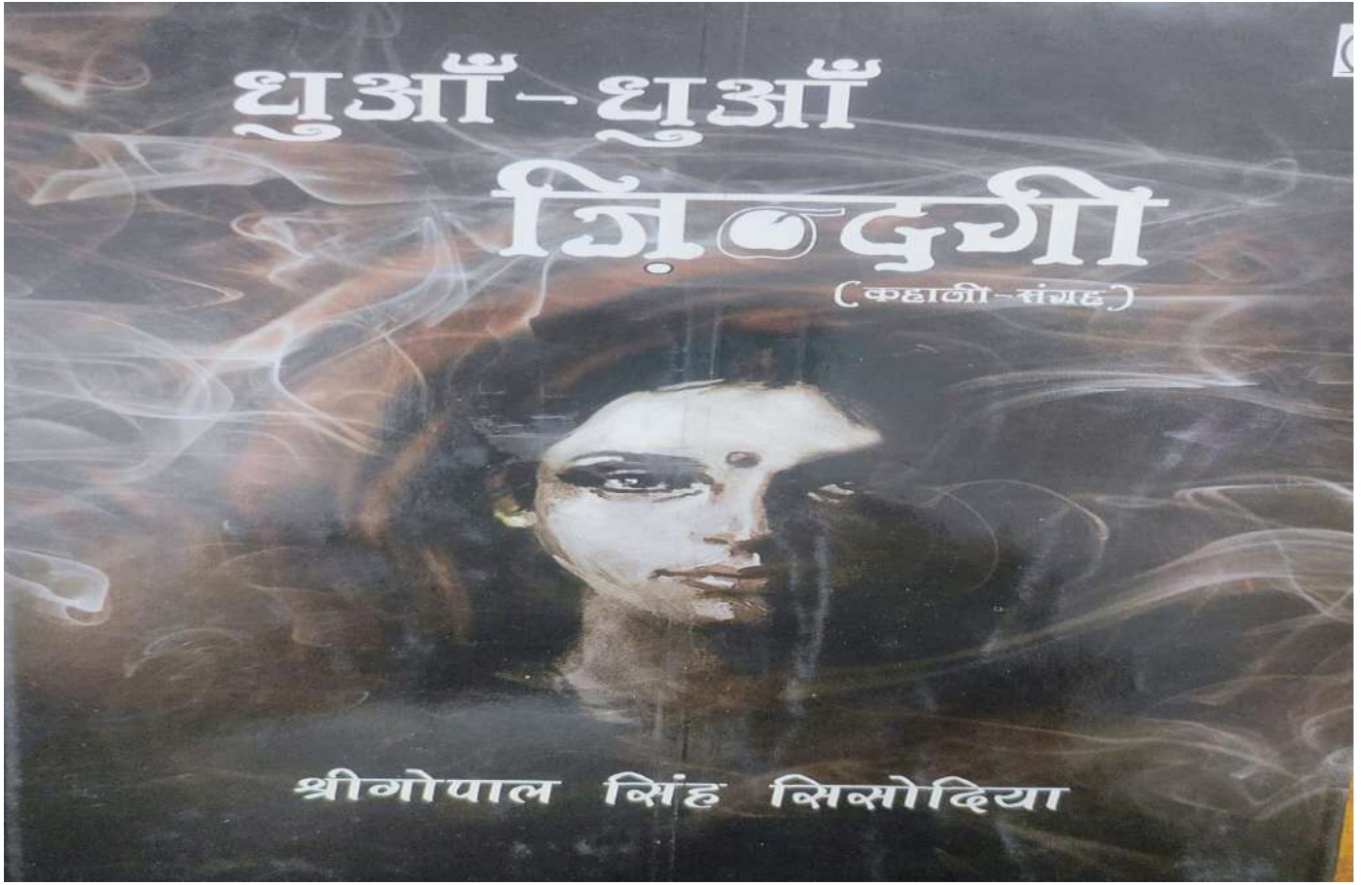
या बिखरने पर समेट सके ऐसी झप्पी।
जैसे एक बच्चा हताश-निराश हो जाता
है

और रो देता है इस उम्मीद से
कि कोई-न-कोई उसे चुप करा लेगा।
वैसा ही इंतजार मुझे भी है तुम्हारा!

सोनल मंजू

"मतभेद नहीं हो रिश्तों में
सामंजस्य हमेशा बना रहे
ना तुम रूठो ना मैं रूठूँ
ये प्यार हमेशा बना रहे..।।
ये साथ मधुर संबंधों का
जीवन भर मधुर बनाएंगे
है सुखद भाव अंतर्मन में
ये साथ हमेशा बना रहे..।।
जीवन बगिया में पुष्प खिलाएँ
भौरों का मदमस्त समर्पण हो
जो भी है अर्पण कर दूँ मैं
ये भाव हमेशा बना रहे..।।"

~ विजय कनौजिया



धुंआँ-धुंआँ ज़िन्दगी (कहानी संग्रह) : श्रीगोपाल सिंह सिसोदिया

समीक्षा के लिए पुस्तक अनिवार्यतः भेजें : संपर्क भाषा भारती, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर विस्तार, नई दिल्ली-110092

समीक्षक: मीनू त्रिपाठी

वर्तमान सामाजिक परिदृश्यों को समेटे कहानियाँ

श्री गोपाल सिंह सिसोदिया द्वारा प्रस्तुत बारह कहानियों का संग्रह समकालीन सामाजिक परिस्थितियों का विशद एवं सम्यक चित्रण है। यह सिसोदिया जी का ----- कहानी संग्रह है। जीवन के विभिन्न पहलुओं के ताने-बाने से बुनी प्रत्येक कहानी तत्कालिक परिस्थितियों का अनूठा बिम्ब प्रस्तुत करती हैं। विभिन्न प्रसंगों के माध्यम से कहानियों के ताने-बाने बुने गए हैं, जिनसे इन रोचक कहानियों का जन्म

हुआ है। प्रत्येक कहानी की भाषा सरल एवं

पुस्तक समीक्षा

लेखिका: चित्रा विशाल श्रीवास्तव
(प्रयागराज)

प्रकाशन: पोएट्रीवर्ल्डऑर्गेनाइजेशन
प्रकाशन वर्ष: 2022



सहज होने के कारण ग्राह्य है। संग्रह की कहानियाँ पाठक को जीवन की सच्चाइयों से रूबरू कराती हैं। उनके मन को उद्वेलित व आंदोलित भी करती हैं। कहानियों का सरल-सहज प्रवाह पाठकों को बांधे रखने में सक्षम है। सभी कहानियाँ पाठक को विचारों के नए धरातल पर खड़ा करती हैं।

संग्रह की पहली कहानी 'आने वाला कल' पाठक को वर्तमान से भविष्य काल की ओर ले जाता है। एक गिलास पानी के गिर जाने पर माँ का क्रोधित होना और बच्चे को सजा देना आने वाले कल की भयानकता को दर्शाता है। अगला युद्ध पानी के लिए होगा इस बात की भी पुष्टि करता है। यह कहानी स्कूलों की पाठ्य पुस्तकों में शामिल की जानी चाहिए। इस कहानी से बच्चों और बड़ों को सहज शिक्षा मिलती है कि यदि हम आज पर्यावरण

के लिए सचेत न हुए तो 'आने वाला कल' हमारे सामने कहानी वाले भयानक स्वरूप में आज बनकर खड़ा होगा। यह कहानी लेखक की पर्यावरण के प्रति चिंतन और संवेदनशीलता को दर्शाता है। पर्यावरण से जुड़े विषय मुझे सदा से ही रुचिकर लगे हैं। इस कारण भी यह कहानी मुझे बहुत अच्छी लगी। इसके सार्थक प्रस्तुतिकरण एव सुन्दर सन्देश के लिए मैं लेखक को अनेकशः बधाई देती हूँ। समाज में स्त्रियों के प्रति पुरुषों की लोलुप नज़र सदा से ही रही है। 'मी टू' कहानी उन स्त्रियों की सहज अभिव्यक्ति है जो पुरुषों के कुत्सित व्यवहार से दो-चार हुई है। घर के भीतर, बाहर या कार्यक्षेत्र में उनके दैहिक व मानसिक शोषण की कहानियाँ असामान्य नहीं हैं। विगत वर्षों में 'मी टू आन्दोलन' के माध्यम से नारियों ने पुरुषों की कुत्सित मानसिकता के खिलाफ आवाज बुलंद की है। इस कहानी में जो स्त्रियाँ लोकलाज वश चुप रहीं वो भी 'मी टू से' प्रेरणा लेकर वर्जनाओं को तोड़ते हुए आवाज उठाती है। इस अभियान में आरंभिक हिचक के बाद परिवार एवं समाज का स्त्रियों के साथ खड़ा होना काबिलेतारीफ है। 'मी टू' कहानी में नायिका के बाद उसकी सहेली भी स्वयं के उत्पीड़न के खिलाफ मुखर होती है और यही मोड़ कहानी के उद्देश्य की पूर्ति करता है।

'लहू' नामक कहानी एक क्रूर सामाजिक विसंगति की ओर इंगित कर के मन को आंदोलित करती है। कुदरत के अन्याय से उत्पन्न शारीरिक अक्षमता के कारण घर-परिवार से जबरन अलग कर दिए जाने वाले बच्चों के जीवन पर कैसे कुठाराघात होता है, इसकी झलक इस कहानी में मिलती है। आज भी किन्नर समाज के लिए उपहास योग्य है क्यों नहीं इनकी शारीरिक विकृति को अन्य शारीरिक विकृति की तरह स्वीकारते हुए समाज की मुख्य धारा में शामिल किया जाता है। क्यों नहीं इन्हें भी अन्य दिव्यांगों की तरह स्वीकारा और सहारा दिया जाता है।

इसी क्रम में हिजड़ा गली कहानी भी आती है जो इस समुदाय के मानवीय पहलू को उजागर करती है। जिस गली को समाज न केवल उपेक्षित दृष्टि से देखता है वरन् घृणा भी करता है, वही गली जब एक असहाय नारी की गुंडों से रक्षा करती है तब लोगबाग वाह-वाह कर उठते हैं। जिस गली से आज तक सब नफरत

करते चले आए हैं उसी गली के सामने सब श्रद्धा से मस्तक झुका देते हैं।

किन्नरों पर लिखी दोनों कहानियाँ लहू और हिजड़ा गली दोनों ही कहानियाँ मार्मिक हैं। एक से विषय होते हुए भी इनका अंत दोनों को अलग करता है। इस विषय को उठाना और उस पर लिखना निस्संदेह साहस का काम है इसके लिए सिसोदिया जी निस्संदेह बधाई के पात्र हैं।

अलविदा कहानी सैनिकों के प्रति दिग्भ्रान्त एवं पूर्वाग्रह से ग्रस्त राजनीतिक दलों की उस तुच्छ मानसिकता को दर्शाता है जो कि निहित व छुद्र स्वार्थों के कारण देश की सेनाओं को भी नहीं बख्शते। सबूत गैंग की मानसिकता को दर्शाती यह कहानी मार्मिक परिदृश्य उत्पन्न करती है। साथ ही देश पर मर-मिटने का जज्बा रखने वाले सैनिकों की विवशताओं को रेखांकित करती है।

धर्म की आड़ में अपने घृणित कार्यों को महिमामंडन व छद्म आडम्बर से छिपाते हुए भोली-भाली व धर्मभीरु जनता को बेवकूफ बना कर स्वार्थ सिद्ध करने की दास्तान है कहानी 'स्वामी जी'। ऐसे ढोंगी साधुओं से जनता को सचेत करती कहानी और प्रसंग पाठकों की आँखों में बंधी अंधविश्वास की पट्टी खोलने में सक्षम हैं। इसी क्रम में 'ब्राह्मणीकरण' कहानी आती है जो सामाजिक विषमताओं को सतह पर लाकर पाठकों को किसी धर्मगुरु पर आस्था जताने से पूर्व सचेत करने में सक्षम करती है। धर्म के नाम पर आज अर्थ का व्यापार हो रहा है इसको समझना होगा। ऐसे विषय को उठाना समाज कल्याण की और उठाया कदम है जिसके लिए लेखक को साधुवाद है।

'धुंआ-धुंआ जिन्दगी' कहानी बढ़ते हुए प्रदूषण के प्रति हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। प्रदूषण चाहे वातावरण का हो या मानवी सोच का हो। दोनों ही समाज के लिए घातक हैं अतः इनसे निजात पाना अति आवश्यक है। यही विचार पाठक के मानस पटल पर उकेरने में समर्थ हुई है सोदेश्यपूर्ण कहानी धुंआ-धुंआ जिन्दगी।

'दम तोड़ती ममता' कहानी के माध्यम से वर्तमान काल में दरकते पारिवारिक रिश्तों को न केवल आवाज दी गयी है अपितु भौतिकतावादी सोच से ग्रसित मानव मन के कोमल भावों की सूखती बेलों को पुनर्सिंचित

करने की आवश्यकता पर बल दिया गया है। निम्न या मध्यम वर्ग पृष्ठभूमि के माता-पिता अपना सब कुछ लुटाकर बच्चों को काबिल बनाते हैं। वही बच्चे जब कुछ काबिल बन जाते हैं तब नवसम्पन्नता की चकाचौंध से भ्रमित होकर अपने नैतिक मूल्यों को दरकिनार करते हुए माता-पिता को भूल जाते हैं। 'दम तोड़ती ममता' कहानी में संपन्न बेटे-बहू जिस तरह अपनी माँ की उपेक्षा करते हैं वह मन को क्षुब्ध करता है। दो पीढ़ियों में आई दूरी को पाटने का एक ही उपाय है और वह है अपनी सनातन संस्कृति और रिश्तों के प्रति संवेदनाओं का पुनर्जागरण। तभी हम परिवार नामक संस्था को मजबूत कर पाएंगे।

संग्रह की शोभा बढ़ाती दो कहानियाँ 'जहर मैंने खुद पिया' एवं 'सहारा' दो पीढ़ियों के मध्य संघर्ष को दर्शाती हैं। सामाजिक व पारिवारिक वर्जनाओं को तोड़ कर अपने मन की करने की लालसा नई पीढ़ी को दिग्भ्रमित कर देती है। गर्म खून के उबाल में सामाजिक संस्कारों को दरकिनार कर बिना सोचे समझे फैसले लेने का क्या हथ्र हो सकता है, इसका सम्यक व मार्मिक चित्रण इस कहानी में मिलता है। इन परिस्थितियों में पुरुष प्रधान समाज में नर का तो कुछ खास नहीं बिगड़ता परन्तु नारी को जो यंत्रणा झेलनी पड़ती है वह कल्पनातीत है। जहां 'जहर मैंने खुद पिया' कहानी को नया मोड़ देकर नायिका द्वारा हार न मान कर जिजीविषा का परिचय देकर परिस्थितियों से लोहा लेना आशा की एक किरण का प्रस्फुटीकरण दर्शाता है। वहीं 'सहारा' कहानी में गैर धर्म की बहू को सामाजिक परिस्थितियों के अंतर्गत छद्म नाम से ही सही पर एक असहाय अवस्था में अपना लेना एक नये बोध को जन्म देता है। परन्तु लेखक द्वारा कहानी को कुशलता से मोड़ देकर पाठक को सर्वथा नये धरातल पर खड़ा कर देना विस्मयकारक है। जबकि विद्या की जगह कमला का लाया जाना कहानी का रुख मोड़ देता है। सौतेली माँ का अपने पुत्र के जन्म से पहले और उसके बाद का व्यवहार उद्वेलन पैदा नहीं करता क्योंकि प्रायः ऐसा होता ही है। पर सौतेले बेटे का अपने भाई की जान बचाने का उद्योग और असफल रहने पर उसकी विह्वलता सर्वथा नयी अनुभूति प्रदान करता है। साथ ही बदली परिस्थितियों में माँ के प्रति कोमल व्यवहार पाठक की उद्विग्नता

को शांत करने की चेष्टा भी एक नये आयाम को स्पर्श कराना है।

पुस्तक की अंतिम कहानी 'गाँव को लगा मोबाइल का रोग' द्वारा स्मार्टफोन का सामाजिक ताने बाने पर कुप्रभाव बखूबी दर्शाया गया है। मित्रों के प्रभाव में आकर बच्चे गलत कार्य करने में भी नहीं चूकते और अपराध की ओर मुड़ जाते हैं। किशोर का एक मोबाइल के लिए चोरी करना एवं बाद में उसी गलती के लिए मन में ग्लानि उत्पन्न होना, किशोरावस्था के मनोविज्ञान को बखूबी परिलक्षित करता है। सामान्यता पुत्र की गलती पर सजा देने वाले पिता द्वारा अपराधीकरण के मुहाने पर खड़े पुत्र को क्षमा कर संबल प्रदान करने का प्रयोग कहानी को एक नया और सुखद मोड़ देता है। इस सोद्देश्य परिकल्पना के लिए मैं श्री सिसोदिया जी को हृदय से साधुवाद ज्ञापित करती हूँ।

यह कहानी संग्रह सामाजिक सरोकारों को समेटे सरस व सहज भाषा शैली में रची कहानियों को समेटे है। विषयवस्तु पर अच्छी पकड़ आपकी विशेषता है। संग्रह शिल्प एवं भाषा की कसौटी पर खरा उतरता है और पाठक को अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम है। सभी कहानियाँ चिंतन की ओर ले जाती है ये इस संग्रह की खासियत है। आशा करती हूँ कि श्री गोपाल सिंह सिसोदिया जी इसी प्रकार साहित्य साधना करते रहेंगे और हिंदी साहित्य को अपनी कृतियों से समृद्ध करते रहेंगे। मैं उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करती हूँ।

समीक्षार्थ प्राप्त पुस्तकें :

- (1) रात खिड़कियों से (काव्य संग्रह) प्रतिमा शर्मा "पुष्प"
- (2) लघुकथाओं का खजाना (लघुकथा संग्रह) डॉ योगेंद्र नाथ शुक्ल
- (3) सलीबें (काव्य संग्रह) डॉ रंजना गुप्ता

समीक्षा के लिए पुस्तक

अनिवार्यतः भेजें :

संपर्क भाषा भारती, 97, सुंदर
ब्लॉक, शकरपुर विस्तार, नई
दिल्ली-110092

आशा शैली साहित्यकार सम्मान से प्रतिष्ठित

जी

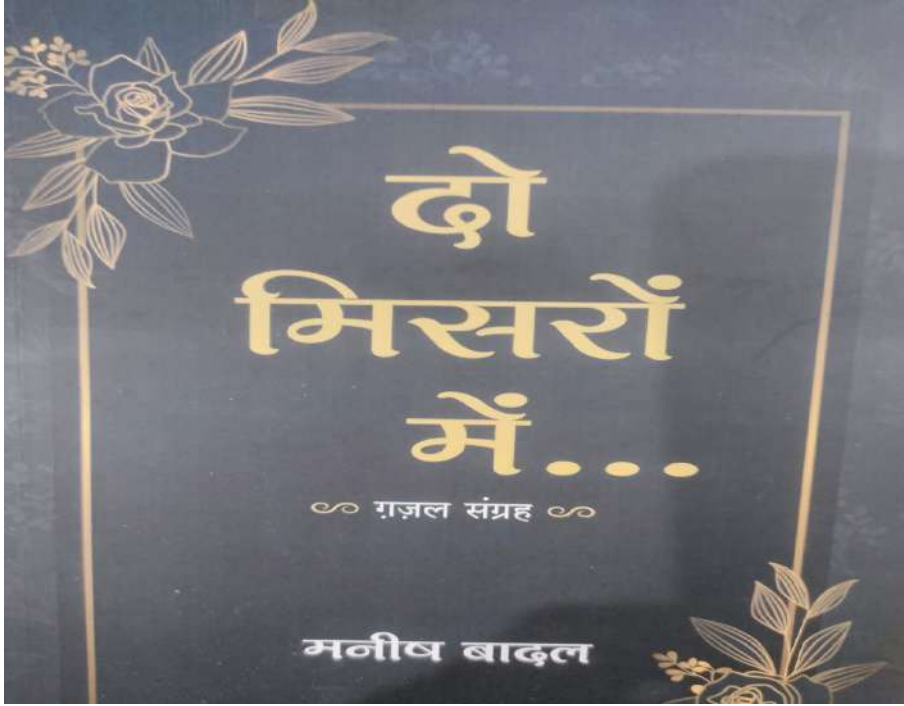
वन के कुरुक्षेत्र का एक पड़ावा कल एक शिखर छूते हुए लगा कि वास्तव में सम्मान इसे ही कहते हैं।

कुल्लू की सहकारी संस्था 'भुटिको' के एक सदस्य का मुझे अचानक फोन आया कि आपका नाम इस बार विद्याचन्द ठाकुर स्मृति सम्मान के लिए चुना गया है। तब मैंने विशेष उत्साह नहीं दिखाया। लिखती हूँ तो सम्मानों से रोज वास्ता पड़ता है। वही सब मन में था। पता चला कि अजीत समाचार के मुख्य सम्पादक श्री सिमर सदोष ने यहाँ मेरा नाम दिया था। यह जानकर भी मैंने बहुत अधिक महत्व नहीं दिया क्योंकि सिमर सदोष मेरे पुराने मित्र हैं। मेरी अंग्रेजी में अनुवादित कहानियों की पुस्तक 'नाइन लाइन' भी छपकर आ गई थी तब तक। हिन्दी का कहानी संग्रह 'बटेसर की चक्की और गजल संग्रह 'मेरे हिस्से का सूरज' भी छप चुकी थी तो 'भुटिको' के अध्यक्ष ने सहर्ष इन पुस्तकों के विमोचन का दायित्व भी ले लिया और मैं अपनी मित्र अंजना छलोत्रे और अंग्रेजी अनुवादक डॉ पूजा गुप्ता के साथ 20 अप्रैल की रात को कुल्लू में थे।

21 अप्रैल को मेरी तीन और अंजना छलोत्रे की दो पुस्तकों का विमोचन विद्वानों की इस सभा में हुआ। इसके बाद मुझे विद्याचन्द ठाकुर गरिमामय राष्ट्रीय सम्मान भुटिको के अध्यक्ष पूर्व कृषि मन्त्री ठाकुर सत प्रकाश जी एवं पूर्व कुलपति पंत नगर विश्व विद्यालय के हाथों प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। बराबर में अंजना छलोत्रे और डॉ पूजा गुप्ता खड़ी हैं।



पुस्तक समीक्षा : मनीष बादल - "दो मिसरों में"



अपारे काव्य संसारे कविवरेकः प्रजापतिः।
यथास्मै रोकते विश्वम तथेद परिवर्तिते।

अग्निपुराण के इस श्लोक के अनुसार किसी ने कवि की तुलना ब्रह्मा जी से करते हुए ठीक ही लिखा है कि रचनाकर्म और उसकी स्वतंत्रता एक सापेक्ष स्थिति है। रचनाकार अपनी सृजनशीलता में स्वतंत्र होते हुए भी यथार्थ स्थितियों से संबद्ध रहता है। उसकी स्वतंत्रता का अर्थ है व्यापक मंगल विधान के लिए संकल्प शील होना, अपने युग की जटिलतम समस्याओं से लोगों को परिचित कराना, और गतिरोधी शक्तियों का साहसपूर्वक सामना करते हुए निर्भीक भाव से आगे बढ़ना। इन्हीं सब विशेषताओं से परिपूर्ण मनीष 'बादल' इक्कीसवीं सदी के महत्वपूर्ण ग़ज़लकार हैं। 'दो मिसरों में' उनका पहला ग़ज़ल संग्रह अवश्य है लेकिन पुस्तक पढ़ने से यह निश्चित हो जाता है उनकी ग़ज़ल के प्रति साधना पुरानी है।

संग्रह की भूमिका प्रोफेसर वशिष्ठ अनूप, लक्ष्मी शंकर बाजपेई, आलोक त्यागी, अंजुम रहबर, डॉक्टर अंजुम बाराबंकी जैसे प्रबुद्ध जन ने

लिखी है। इन प्रबुद्ध जनों का लिखना ही इस बात का द्योतक है कि इस संग्रह की शिल्पगत कसावट कितनी परफैक्ट होगी। इस पुस्तक को सुरेन्द्र शर्मा, अशोक चक्रधर, तेजेन्द्र शर्मा सरीखे रचनाकारों का आशीर्वाद पहले ही प्राप्त है। अशोक चक्रधर जी मनीष 'बादल' के लिए कहते हैं "मनीष बादल को अभी बहुत आगे जाना है, मैं हमेशा उनकी अगवानी में खड़ा मिलूँगा।" जब कोई ग़ज़ल का व्याकरण न जानते हुए भी उस संग्रह को अपने आशीर्वाद से नवाजे फिर उस संग्रह की लोकप्रियता का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। सुरेन्द्र शर्मा जी लिखते हैं "मैं ग़ज़ल के व्याकरण का तो बहुत जानकार नहीं हूँ पर मुझे यह कहने में तनिक भी संकोच नहीं है कि मन को छूने वाला लिखते हो और बहुत शीघ्र तुम्हारी गिनती देश के श्रेष्ठ ग़ज़लकारों में होने जा रही है।" कोई भी रचना जब अनुभव और धैर्य की भट्टी में तपती है तब ही उसका निखार बढ़ता है। रचनाकार जब अपनी रुचि के अनुसार विश्व को परिवर्तित करता है तो उसकी रचनाओं में और पार्श्व के गहरे काले रंग भी यथार्थ जीवन से ही प्रेरित होते हैं। मनीष भी ऐसे ही गंभीर यथार्थवादी शायर हैं, जिनके पाँव वर्तमान की धरती पर और आँखें

भविष्य के क्षितिज पर लगी हुई हैं। मनीष की ग़ज़लें थके हुए मनुष्य के लिए सिर्फ विश्रांति भर ही नहीं हैं, अपितु आगे बढ़ने के लिए उत्साहित भी करती हैं। यथा "खयालों के बदलने से भी होती हैं नई सुबहें फ़क़त सूरज निकलने से सवेरा तो नहीं होता।" मनीष की जिजीविषा उन्हें कभी हारने नहीं देती। अँधेरे को चीर रोशनी की सुनहरी किरनों की प्रतीक्षा कर वह बढ़ती ही जाती है अपने अगले पड़ाव की प्रतीक्षा में। यह आकाश की ऊँचाई छूने को तत्पर दिखती है। उनकी जिजीविषा यही सिखाती है कि पंख काटने को तत्पर कितने ही बाज क्यों न बैठे हों, लेकिन उड़ना का प्रयास कभी नहीं छोड़ो। "पर कटे पंखी का यारों हौसला तो देखिए उड़ नहीं पाता है लेकिन फड़फड़ाता है बहुत।" "सीने में उसके आग है जिन्दा अभी, मगर दुनिया को लग रहा है शरारा नहीं है वो ॥" " 'बादल' ग़मों के कुछ दिनों में छूँट ही जायेंगे ये सोचकर किसी को पुकारा नहीं है वो ॥" सृजक का तात्कालिक रिश्ता प्रकट रूप से समाज से ही होता है और उसकी झलक उसके लेखन में परिलक्षित होती है। मनीष के सृजित समाज का फलक भी बेहद विस्तृत है। अधिकतर ग़ज़लें सामाजिक सरोकार को समर्पित हैं लेकिन पूरे संग्रह के कैनवास पर विषयों के विविध रंग सृजित हुए हैं। प्रकृति से लेकर विभिन्न विषय साथ ही ईश्वर का होना भी एक सोच के रूप में ग़ज़लों में विद्यमान है। लेखन वही सफल होता है जो आम जन के अनुभवों से बुना जाये। मनीष ने परकाया प्रवेश कर आम जन के भाव संग्रहीत करने में पूर्ण सफलता पाई है। "जब से देखा भागते बच्चों को रोटी के लिए आसमाँ पर तब से बे-मौसम ही बादल छा गए।" "बात लड़की देखने की वो ये कहकर टालता कौन-सा कोई पर-ए-सुर्खाब मेरे पास है।" भारतीय वाङ्मय में नारी के लिए अनेक नाम प्रचलित हैं जिसके माध्यम से हमें नारी के विभिन्न पक्षों का बोध होता है। नारी शब्द में ही शक्ति, सौंदर्य एवं शालीनता तत्व समाहित होते हैं। नारी का प्रत्येक रूप वन्दनीय है परन्तु माँ इस संसार का

सबसे प्यारा शब्द है। माँ की तुलना ईश्वर से की जाती है। माँ सृष्टा होती है। माँ सिर्फ माँ होती है। उसे जाति-मजहब तो बहुत दूर की बात है, सिर्फ इंसानों की परिधि में भी नहीं बाँधा जा सकता। मनीष ने माँ को समर्पित बहुत ही खूबसूरत शेर कहे हैं। "सँभाला कोख में हमको में हमको है पूरे नौ महीने तक ये ममता माँ की हम सब पर हमेशा की उधारी है।" "एक बकरी दूध पिल्ले को पिलाती, बन के माँ खास भी है, पाक भी, पर खून का रिश्ता नहीं।" आधुनिकीकरण के इस दौर में रिश्तों और समाज पर बाजार तेजी से हावी होता जा रहा है। जीवन का प्रेम और मिठास आपाधापी की दुनिया में कहीं खोती जा रही है। सिर्फ रिश्तों पर ही नहीं घर के चूल्हे से आती उन पकवानों की खुशबू पर भी बाजार बाद तेजी से हावी होता जा रहा है। इसमें कोई दो राय नहीं कि तेजी से बदलते इस दौर ने मनुष्य की उम्र के हर पड़ाव को प्रभावित किया है। अगर बाल्यावस्था की बात करें, तो बचपन खो गया है या कहे कि आज के दौर में बचपन जैसा कुछ रह ही नहीं गया। ऐसे में मनीष के इन शेरों से भारतीय संस्कृति और बच्चों के भोले बचपन की सौधी खुशबू आती है। "वो आलीशान होटल को यकीनन मुँह चिढ़ाती है उबलते चाय की खुशबू जो उस ढाबे से आती है।" "मेरे बढ़ते हुए बच्चों में भोलापन अभी तक है मुझे चिंता इसी की है, इसी पर नाज़ भी होता।" "बच्चे लंदन में हैं सेटल', फ़ख़र से कहते पिता पर घिरे अंदर ही अंदर मोह के तूफ़ान में।" "गाँव का है हाट छूटा, सिल की चटनी भी नहीं खोजते हम स्वाद जाकर मॉल की दूकान में।" मनीष की गज़लों में सत्ता की चालाकियाँ और षड्यंत्र तथा मध्यम वर्गीय परिवार की परेशानी को उजागर करती हैं साथ ही हमारी सामाजिक समस्याओं और सवालियों को उनकी जटिलता और जनपक्षीय नज़रिए सहित बखूबी व्यक्त करती हैं। "फ़ाइलों में ही बँटते रहे अन्न और सब ग़रीबों को मिलते निवाले रहे।" "पूछती खाली मेरी जब हुकमरानों से क्या से क्या हो गए हालात, खुदा खैर करो।" गज़लगो की इस पीड़ा को गहराई से समझो तो यह आज के वक्त की कठिन सच्चाई को स्पष्ट निष्कर्षित करता है। जहाँ तक दृष्टि जायेगी वहाँ तक स्वार्थ की सिद्ध स्थली ही नज़र आयेगी। समाज में फैले दोगलेपन और चालाकियों का प्रभाव हर वर्ग पर पड़ता है। साहित्य जगत भी इससे

अछूता नहीं। अपने सूख चुके वैचारिक ढूँठ पर बैठ चापलूसी और चाटुकारिता के पंखों पर बैठ साहित्य की वैतरणी पार करने वाले सामन्ती कवियों और साहित्यकारों को कड़ी फटकार लगाने से बादल को कोई हिचक नहीं है। वो ऐसे कवियों की जमात में शामिल होने से सख्त परहेज रखते हैं। "जुगनू जैसा कम चमकेगा, जल्दी ही मर जायेगा किंतु न माथा टेकेगा वो सामन्ती दरबारों में।" गज़ल के कहन में किस तरह कथ्य को रदीफ़ से पकड़ा जाता है इसका कौशल संग्रह में हर जगह दिखाई पड़ता है। जिस तरह के भाव और विचार सामने आते गये उसी के अनुरूप कथ्य को उसी शैली में विस्तार दे मनीष गज़ल कहते हैं। बड़ी बातों को सहजता से कह देने का हुनर मनीष में बखूबी नज़र आता है। इन गज़लों का एक सुखद पक्ष यह भी है कि दुर्गेश उपाध्याय और मोनिका साईं ने इन गज़लों में सुरों की खोज की है। इन्होंने मनीष की कई गज़लों को न सिर्फ संगीतबद्ध कर सुर ताल से सजाया है अपितु अपनी सुमधुर आवाज़ भी दी है। कानों में रस घोलती ये गज़लें मन को सहज की छू जाती हैं। गज़ल की भाषा गज़ल को अभिव्यक्ति देने का सिर्फ एक माध्यम ही नहीं बल्कि वह गज़ल कहने वाले के व्यक्तित्व की सटीक पहचान भी होती है। मनीष की गज़लों की भाषा गूढ़ता और क्लिष्टता से इंकार करती है। अपने एक दोहे में वो यह कहते भी हैं "कठिन लिखूँ या क्लिष्ट मैं, अर्थ निकलता एका जो सबके आए समझ, लेखन वो ही नेका।" संभवतः यह उनके व्यक्तित्व की बेबाकी और खारापन ही है कि संग्रह की तमाम गज़ल एक निष्कपट, निष्कवच और निडर भाषा में लिखी गई हैं। कहते हैं नये प्रयोग किसी भी विधा को समृद्ध करते हैं। मनीष ने अपनी गज़लों में भाषा का मिथक तोड़ते हुए हिंदी, उर्दू, अंग्रेजी शब्दों का बखूबी इस्तेमाल किया है। यह शब्द इतनी सहजता से प्रयोग किये हैं कि पढ़कर लगता है इनकी जगह पर कोई और शब्द शायद गज़ल को वो खूबसूरती न दे पाता। बहुत से कवि अपने को प्रगतिवादी कहते हैं पर उन्होंने देश और मजहब के जैसे ही भाषा का भी बंटवारा कर लिया है। गज़ल गज़ल है, उसे हिंदी, उर्दू के शब्दों की परिधि में क्यों बाँधना? आज आम बोलचाल की भाषा में कुछ उर्दू और अंग्रेजी

के शब्द दूध में शक्कर के जैसे घुल-मिल गये हैं। ये सर्वत्र पाठक को अनूठा स्वाद देते हैं। ऐसे में भाषा विशेष से परहेज मुझे तो समझ नहीं आता। स्वयं को व्यक्त करने के लिए उन्होंने भाषा का इस्तेमाल एक सशक्त और मारक अस्त्र के रूप में किया है। मनीष बादल में जहाँ अनुभूति की गहराई है, जीवन-दृष्टि की नवीनता है, वहीं भाषा और अनुभवों को गज़ल में पिरोने की अद्भुत कला है। आम बोली-बानी में रचे बसे शब्दों को जिस खूबसूरती से इस्तेमाल किया गया है वह शिल्प के स्तर पर बेहद कारीगरी का उदाहरण है। "हम कहाँ कहते हैं तुमसे नोटरी से लिख के दो हम तो कसमें प्यार की केवल जुबानी माँगते।" "मेरी फ़ाइल आपकी टेबल पर स्वीकृति को रखी। बात मैंने डाल दी है आपके संज्ञान में।" "मैंने देखा है अँधेरा दिन में भी अक्सर यहाँ। 'पाजिटिव' इक सोच चाहूँ मैं सहर के वास्ते।" दुष्यंत की परंपरा को निभाते हुए हिंदी गज़ल में आजकल बेहतर काम हो रहे हैं। मनीष बादल भी उसी परंपरा को पूरी प्रतिबद्धता से निभाते हुए कथ्य और कहन की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यह संग्रह समय की विसंगतियों और सच्चाइयों को बेबाकी से कहता है। वो अपनी काव्य चेतना और सरोकार को लेकर बेहद संतुलित रहे हैं। हिन्दी गज़ल की लोकप्रियता इस समय शिखर पर है। यह इसलिए संभव हुआ कि विधा में गंभीर काम करने वाले साधक अपनी पूरी रचनात्मक ऊर्जा के साथ लगे हुए हैं। मनीष बादल ऐसे ही महत्वपूर्ण गज़लगो हैं। मेरा ध्रुव विश्वास है सहज सरल शब्दों में गहरी बात कहते हुए ये गज़लें पाठक के मन-मस्तिष्क को अवश्य उद्वेलित करेंगी।

पुस्तक: दो मिसरों में

गज़लगो: मनीष बादल

प्रकाशक: मंजुल पब्लिशिंग हाउस,

मध्य प्रदेश

मूल्य: ₹195

समीक्षक: डॉक्टर उपमा शर्मा



है, कहां कर सकूंगी जुगाड़। चलो छप भी गयी तो सारा मुनाफा तो पब्लिशर के पास जाएगा, छपने से बिकने तक, फिर भी लिखती हूँ कि शायद कोई पढ़ ले और जो कहना चाहती हूँ कोई पढ़ें और हमारी भावनाओं को समझ सके।

फिर भी एक बार कोशिश तो करो।

जी, लेकिन चलो पुस्तक प्रकाशित भी हो गई फिर लेकिन छोड़िए ..

हां लेकिन मैंने तो बहुत सारी बुक अपने मित्रों को रिक्वेस्ट करके बेच दी।

मैं शायद नहीं कर सकूँ क्योंकि सामान बेचना और खुद की किताब बेचना फर्क होता है आलोक जी। मेरा स्वभाव अलग है। नहीं कर सकूंगी मैं।

ओह, अच्छा जब मेरी पुस्तकों का विमोचन समारोह होगा तब आओगी न दोस्त।

कोशिश करूंगी लेकिन मुश्किल होगी।

क्यूं? क्यूं होगी मुश्किल?

स्त्रियों को बहुत सारी समस्याओं का सामना करना पड़ता है, आजादी काम करने की मिल सकती है लेकिन जीना समाज और परिवार के अनुरूप होता है। फिर भी कोशिश करूंगी।

कुछ समय बाद आलोक जी का विमोचन समारोह भी आ पहुंचा। कुछ महीने पहले ही उन्हें उत्तर प्रदेश राज्य सरकार की तरफ से रामधारी सिंह दिनकर पुरस्कार से सम्मानित भी किया गया था। बहुत धूमधाम से विमोचन समारोह मनाया जाने वाला था। दीक्षा के पास भी वाट्सप पर निमंत्रण मिला था लेकिन वह जाती कैसे। वाट्सप पर मिला निमंत्रण, घर में बात की तो न जाने कितने अवरोध पैदा होते। लखनऊ जाना, रुकना और तमाम परेशानियां।

आज विमोचन था दीक्षा सोच रही थी देखो जरा आलोक जी ने ढंग से बुलाया भी नहीं। एक कार्ड भेज देते तो शायद और चाहते तो जा सकती थी मैं। माना कि मैं इतनी बड़ी लेखिका नहीं हूँ, सिर्फ कागजों तक और फेसबुक तक ही सीमित हूँ फिर भी ...खैर वो सोचते हुए मोबाइल निकाल कर पुनः कुछ लिखने लगी थी लेकिन बार बार फेसबुक पर आयोजन के लिए आने वाले अतिथियों की

लघुकथा

सिद्धेश्वर

बुढ़ापे की लाठी

अ

स्पताल के बेड नंबर 37 के बूढ़े मरीज की स्थिति को देख नर्स सोनी परेशान हो गई थी। आज शाम को उसकी आंखों का ऑपरेशन है और स्थिति यह है कि उसके साथ कोई भी परिजन नहीं। वह

खीजते हुए 70 वर्षीय बूढ़े मरीज शंकर की आंख में इंजेक्शन लगाने के बाद बोली -

" बाबा ! आज ही आपकी आंखों का ऑपरेशन है। कम से कम एक परिजन तो आपके साथ होना चाहिए ? आंख के ऑपरेशन के बाद कौन आप की दवा- दारू, देख -रेख बढ़िया से कर सकेगा ?"

" सिस्टर, इस बुढ़ापे में सगे भी बेगाने हो जाते हैं। एक बेटी थी हमारी, मगर उसकी शादी ऐसे घर में हुई, जिसका पति हमारे घर उसे जल्दी आने ही नहीं देता। "

" आपकी पत्नी तो होगी ? "

" हां, मेरी पत्नी ममता ही तो है, जो हमारे साथ हमारे गांव में रहती है। उसके भाई की शादी थी, वहां जाते ही वह बीमार पड़ गई। "

" बेटा रहता तो, वह जरूर आपके पास दौड़ा चला आता। इसलिए कहते हैं, दर्जनों बेटियां हो जाएँ, मगर उससे क्या ? एक बेटा भी साथ हो, तो वह बुढ़ापे की लाठी बन जाता है !"

" बेटे की बात मत कहो सिस्टर! ऐसा बेटा होने से ज्यादा बेहतर है निर्वंश होना। आज के जमाने में बेटा, जो शादी-ब्याह होते ही जमाने के रंग में रंग जाता है और अपनी प्राइव्सी बनाए रखने के लिए, अपने बूढ़े -मां बाप को अपने गांव पर ठिकाने लगा आता है। सुबह - शाम अपने बेटे - बहू की कड़वी बातें सुनने से अच्छा है उससे दूर, अकेले जीवन यापन करना। "

अपनी आंखों में छलकते आंसुओं को पोंछते हुए उसने आगे कहा -

" बेटे ने तो मोबाइल फोन पर ही अपने नहीं आने का बहाना बना दिया कि ऑफिस से छुट्टी नहीं मिल रही है ! मैं जैसे भेज रहा हूँ पापा जी, मम्मी के साथ हॉस्पिटल जाकर अपनी आंखों का ऑपरेशन करवा लीजिएगा। प्लीज पापा जी, सॉरी। ! "

मोबाइल फोन पर बेटे की आवाज अब भी मेरे कानों में गूँज रही है सिस्टर। !"

नर्स और मरीज के बीच अभी वार्ता चल ही रही थी कि उस बूढ़े की पत्नी दौड़ती हुई आई और सामने खड़ी हो गयी -

" किस बात की चिंता करते हो जी ? तबीयत बिल्कुल ठीक हो गई है मेरी ! आपकी आंखों के ऑपरेशन की खबर पाते ही मैं अपने मायके से दौड़ी चली आ रही हूँ। बेटा नहीं है तो क्या, हम दोनों एक - दूसरे के लिए बुढ़ापे की लाठी हैं न ! " □□□



बहुताशाता

कहानी : आशा पांडेय ओझा

आ

ज अच्छी
बरसात

आई,गाँव-गलियों नालियों में पानी भर गया, घरों के चौगान भी सभी जलमग्न हो गये। अपने कमरे की खिड़की में बैठा चमन पास की सड़क पर तेज गति से घुटनों-घुटनों बहते हुवे पानी को देख रहा था, अचानक उसकी नज़र पानी में डूबने से खुद को बचाने का प्रयास करते एक नन्हे से पिल्ले पर पड़ी, वह फुर्ती से सड़क की ओर दौड़ा। उसने जलमग्न सड़क में डूबते हुवे उस नन्हे पिल्ले को उठाया व तुरंत घर ले आया।

पानी में देर तक भीगने के कारण पिल्ला ठिठुर रहा था, वो सिकुड़ रहा था। चमन ने एक पुराना तौलिया लिया उसने उसको पौछा, व बहुत देर सहलाया,

पिल्ला अब थोड़ा सहज हो गया, वो चमन

चमन ने सोचा कि इसके घर वाले इसे खोज रहे होंगे पर ऐसी जलमग्न सड़कों में कहाँ ले जाऊँ इसको... कैसे खोजूँ इसके घर वाले? उसने बारिश रुकने व पानी उतरने का इंतज़ार करना उचित समझा।

का हाथ चाटने लगा, चमन समझ गया कि पिल्ले को भूख लगी

है, एक कटोरी में दूध लाकर चमन ने उस पिल्ले को पिलाया।

चमन ने सोचा कि इसके घर वाले इसे खोज रहे होंगे पर ऐसी जलमग्न सड़कों में कहाँ ले जाऊँ इसको... कैसे खोजूँ इसके घर वाले? उसने बारिश रुकने व पानी उतरने का इंतज़ार करना उचित समझा।

अब दिन भर चमन पिल्ले के साथ खेलता रहा, उसके सामने कभी बॉल फैंकता, कभी कोई खाली डिब्बा, कभी दूध रखता, कभी ब्रेड, बिस्किट डालता, चमन ने पिल्ले का नाम बबल रख दिया कुछ घण्टों में चमन-व बबल अच्छे दोस्त बन गए। शाम पाँच बजे के लगभग बारिश भी पूरी तरह रुक गई व सड़कों का पानी भी उतर गया।

चमन ने बबल को गोद में उठाया व उसे उस तरफ ले गया जिस तरफ से पानी के बहाव के

तुगलक



लघुकथा

कृष्ण चंद्र महादेविया

ब

र्ष 1971, अप्रैल का
एक दिन था। रात्रि के

करीब 9:00 बज चुके थे मकोक सिंह का
रंगमंच की दुनिया में डंका बज चुका था।
आज तुगलक नाटक की रिहर्सल के
उपरांत अपने मित्र के साथ गेट के बाहर
रेहड़ी वाले के करीब रुकते मकोक सिंह ने
कहा -

"यार जोशी, तुम्हारे पास एक अठन्नी
है?"

"हा है ना।"

"मुझे दे यार, चाय पीनी है..... तुम तो पीते
नहीं।"

अठन्नी पकड़ते ही मकोक सिंह सीधा
रेहड़ी वाले के पास पहुंचा। इधर जोशी के
हाथों के तोते उड़ चले थे। रंगमंच की
दुनिया में इतना बड़ा नाम !! इस तुगलक
के पास अठन्नी भी नहीं।

—००—



साथ बबल के बह कर आने की संभावना थी,
कोई आधा किलोमीटर के लगभग चले होंगे
कि एक कुत्तिया तीन नन्हे पिल्लों के साथ एक
लकड़ी के ऊँचे डंठल पर बैठी दिखाई दी,
चमन के हाथ में पिल्ले को देखते ही कुत्तिया
कूद कर चमन की ओर लपकी व बड़े
आक्रामक अंदाज में भौंकने लगी, जैसे चमन ने
ही उसका बच्चा चुराया हो, पर चमन की गोद
से उतर कर बबल पिल्ले ने कूँ-कूँ करके जाने
क्या कहा कि कुत्तिया भौंकते हुवे एकदम चुप
हो गई, और उसकी आँखों में अब क्रोध की
जगह कृतज्ञता के भाव उतर आए। व गर्दन
झुकाए आगे बढ़ी व चमन के पाँवों को चाटने
लगी।

चमन को समझ नहीं आया कि कुत्तिया ऐसा
क्यों कर रही है जबकि कुछ देर पहले तो काटने
के अंदाज में भौंक रही थी।

बबल को छोड़कर चमन घर लौट आया।
उसने कुत्तिया के व्यवहार के बारे में अपनी
मम्मी से बताया।

माँ ने कहा चमन जब उसको पता चला कि
आपने उसके बच्चे की जान बचाई है तो वो
आपका धन्यवाद कर रही थी।

चमन खुश हो रहा था कि बबल को उसका
परिवार मिल गया, पर दुखी भी हुआ कि
उसका दोस्त चला गया।

माँ ने कहा तू उदास मत हो, रोज शाम बबल

से मिलने चले जाना, उसके बिस्किट, रोटी,
ब्रेड भी ले जाना।

चमन अब ऐसा ही करता।

बबल अपने परिवार के साथ नियत समय
पर चमन का रोज इंतज़ार करने लगा, बबल
का सारा परिवार चमन को देखकर खुश

एक कुत्तिया तीन नन्हे पिल्लों
के साथ एक लकड़ी के ऊँचे
डंठल पर बैठी दिखाई दी,
चमन के हाथ में पिल्ले को
देखते ही कुत्तिया कूद कर
चमन की ओर लपकी व बड़े
आक्रामक अंदाज में भौंकने
लगी, जैसे चमन ने ही उसका
बच्चा चुराया हो, पर चमन
की गोद से उतर कर बबल
पिल्ले ने कूँ-कूँ करके जाने
क्या कहा कि कुत्तिया भौंकते
हुवे एकदम चुप हो गई, और
उसकी आँखों में अब क्रोध
की जगह कृतज्ञता के भाव
उतर आए। व गर्दन झुकाए
आगे बढ़ी व चमन के पाँवों
को चाटने लगी।



आ

दरणीय विनायक दामोदर सावरकर जी।।।।
जन्मदिवस की भरपूर मंगलकामनाएं।।।।!

सावरकर जी।।।। आगामी अट्टाइस मई (28/05/2023) आपका एक सौ अट्टाइसवाँ जन्मदिवस है। आप एक सौ चालीसवें वर्ष को पूर्णता देकर एक सौ इकतालीसवें वर्ष में प्रवेश करेंगे।।।।! यद्यपि आपका शरीर नहीं है, लेकिन आपका होना सिद्ध है।।।।! अद्भुत अध्ययन वाले अध्येता जब नियति के दुष्चक्र में कालापानी भोग रहे होते हैं।।।। तब वे आपको महसूस करते हुए जिजीविषा साधते हैं।।।।।! अंडमान जाने वाले पर्यटक आपकी कालकोठरी देखते हैं।।।।। फोटो खींचते हैं।।।।। वहीं आप दीर्घावधि कोल्हू के बैल की तरह जुतकर सरसों के तेल निकालते थे। कठिन शारीरिक श्रम और आधा पेट भोजना।।।। आपके यातना की पीड़ा मेरी आँखों उतरा रही।।।।।! हम ढेर न पढ़ सके हैं आपके बारे में।।।।! बस इतना पता है कि पुणे से कॉलेज की पढ़ाई और विदेश से कानून की पढ़ाई की थी आपने।।।।! कैद से भागने के प्रयास में आप पकड़े गए थे।।।।! और काले पानी की सजा में आप कोल्हू के बैल बने थे।।।।।!

आपका इतना ही परिचय मेरे मन-मस्तिष्क-शरीर को संतुलित रखने का प्रेरणास्रोत है।।।।! कानून की नियमावली पढ़कर काले पानी की जिंदगी अंतर्जगत की नैसर्गिक जूझ उपजाती रही होगी ना।।।।! आपने तब इतनी पढ़ाई की थी जब आज के हिसाब से मुट्ठी भर आबादी थी देश की।।।।! उसमें भी निरक्षर अधिकांश थे।।।।! साक्षर में भी मैट्रिक पास कर लेना ही बहुत था।।।।! ऐसे में कानून की डिग्री।।।।। विदेश में अध्ययन।।।।। अद्भुत से कम नहीं है आपकी बौद्धिक अर्जना।।।।! आज डिग्रीधारियों की भीड़ में कुछेक को स्तरीय नौकरी न मिले तो कुंठित रहते हैं लोग।।।।! बेरोजगारी आज त्रासदी है।।।।! उच्च शिक्षित महिलाओं के लिए केवल गृहस्थी घुटन भरी होती है।।।।! जबकि आज संचार सुविधाओं के बाहुल्य में योग्यता के तार सहजता से जोड़े जा सकते हैं।।।।।!

सावरकर जी।।।। भुखाए शरीर से श्रम करते हुए।।।। आपको किताबों की बहुत याद आती थी ना।।।।।! भोर से कठिन मेहनत करते हुए।।।।। जंगल सफाते हुए।।।।। जब साँस टँगने लगती थी तब आप कानून की किसी नियमावली के अनुप्रयोग को मन ही मन सोचकर मुस्किया देते थे ना।।।।! आधे पेट भोजन में तड़पती जठराग्नि को सांत्वना देने के लिए मन की दुनिया में जज के सामने पैरवी करते हुए विपक्ष को निरुत्तर कर देते थे न आप।।।।! सावरकर जी बहुत-से दर्द आपके।।।। आज के लिए दवाई हैं।।।।! कैद की बेबसी में गवाहों सबूतों की सुव्यवस्था मन की दुनिया का डेकोरेशन करती थी ना।।।।! अध्ययन का विनियोग न हो पाना कचोटता है।।।।। क्षुधा की पीर मन के उछाह को मार देती है।।।।! अपनी माटी से दूरा।।।।। समंदर से घिरे हुए जंगली जगह में कठोर कारावास।।।।। तकलीफ़ की परतें उघर रहीं विनायक।।।।।! ऐसे ही नहीं नाम अमर हो जाता है।।।।।! बहुत सहे तुम।।।।। काल-कोठरी भी दर्द नहीं कह सकती।।।।।! अमानवीयता को जिए जाना।।।।। अपनी मेधा की अकुलाहट सहना।।।।। मन की ऊर्जा-धारा को घूँटते रहना।।।।। क्षीण शरीर को श्रम में साधते रहना।।।।। आपकी यही जीवन-शैली मेरे लिए मशाल है।।।।।!

यही कमाल का जीना है ना।।।।।! हमें जिंदगी से कोई शिकायत नहीं है मेरे पुरखे।।।।।! आपको जन्मदिवस की खूब बधाई।।।।।!

डॉ। कल्पना दीक्षित



राजल

बिंदास रहते थे, चाल में आवारगी अपनी।
वो गुजरे जमाने की क्या दीवानगी अपनी।

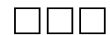
बिन बात पर हँसना वो रुठ जाने की अदा,
बातें वो बचपन की, सभी शरारती अपनी।

लिए रोटी का निवाला पीछे दौड़ाना उसका,
फिर भी नहीं थकती माँ नहीं हारती अपनी।

जो कभी गलती पे डांट कितनी भी लगाये,
फिर गोद में लेकर माँ ही पुचकारती अपनी।

बात ये सच्ची कहती है चन्द्रेश
झूठ बोले तो कभी उससे माँ मारती अपनी।

चन्द्रकांता सिवाल 'चन्द्रेश'





बुरे काम का बुरा नतीजा

(एक सत्य कथा)
विनोद क्वात्रा

अ

रेSSSS “वीनू SSSSS!”
मेरे एक मित्र ने दबी

आवाज में मुझे बुलाया।

“क्या कर रहा है इस समय?”

“कुछ नहीं।।।।” मैं ने भी दबी जुबान में ही उत्तर दिया।

“चल ।।।।सुआराम को देखने चलते हैं।” मित्र ने कहा।

“कहाँ है सुआराम ?” मैंने पूछा, “और कौन से सुआराम की तू बात कर रहा है?”

तब मित्र ने कहा, “तू ने ही तो बताया था कि किसी गैंग ने तुम्हारे बस के यात्रियों को आगरा से एटा आते हुए एक रात लूट लिया था। उस गैंग का मुखिया सुआराम था।”

“हाँ – हाँ, याद आया मुझे! सब की साँस हलक तक आ गई थी।” मैं ने कहा।

“तो चल फिर देखने चलते हैं, वह और उस के गैंग के चार लोग मारे गये हैं।” मेरे मित्र बिल्लू ने जब यह सूचना दी तो मैं खुश हुआ पर उदास भी था जल्दी अमीर बनने के लिए शार्टकट क्यों अपनाते हैं आजकल के युवक।

‘बिल्लू ‘ इस के घर का नाम था। वैसे इस का नाम ‘सूरज’ था। दसवीं पास कर पढ़ना छोड़ दिया था। पिता की बजाजी की दुकान थी उन के साथ बैठता था। मैं जब घर छोड़कर अकेला

ही दिल्ली आ रहा था, तो मेरे पिता ने मुझे वापिस बुलाने इसे बस स्टाप भेजा था। बस खाना होने में समय था। मुझे नीचे बुलाकर दो शब्द कहे इसने जो मैंने जीवन में गाँठ बाँध लिए।

“जा रहे हो तो नहीं कहूँगा कि घर वापिस चलो, लेकिन सोच समझ कर जाना या कुछ बन के लौटना या बिल्कुल मत लौटना, असफल हुये तो घर में बिल्कुल कदर नहीं रहेगी, लोग ताने मारते रहेंगे।”

लोग दिशा शूल को मानते हैं, पर मैं नहीं। सदा कर्म को महान मानकर महत्व दिया है। कर्मरत रहकर सदा आशावादी नजरिया ही रहा है, उस के बाद कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा हर निर्णय में ईश्वर की कृपा रही। हर सफलता में ईश्वर की कृपा और पत्नी का पूर्ण सहयोग प्राप्त होता रहा। समाज का भी हर कदम पर साथ मिला हम दोनों अपनी अपनी साइकिल पर सुआराम और उस के गैंग के मृत साथियों को देखने मुर्दाघर जा रहे थे। जिला एटा की मुख्य जेल घर से दो मील दूर तथा दुकान से लगभग एक मील दूर थी। उस के साथ ही मुर्दा घर था।

हमारी किताबों तथा स्टेशनरी की दुकान थी जो 1965 में हम ने बन्द कर दी। दुकान के सामान की पूर्ति के लिए हमें आगरा या अलीगढ़ जाना पड़ता था। ऐसे ही सामान लेकर आगरा से लौटकर एटा आ रहे थे। चांस की बात है बस लेट चली। मेरे साथ ही ड्राइवर

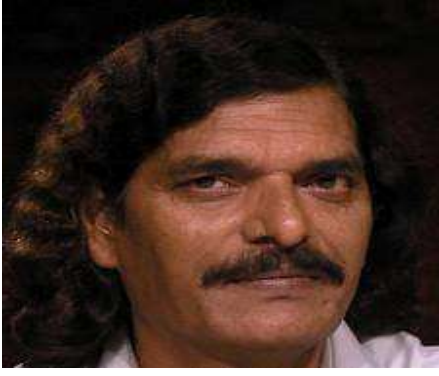
की पिछली सीट पर मनकू (“गोपाल दास नीरज”) जी का सगा भतीजा बैठा था। मुझ से दो क्लास पीछे था मेरे ही स्कूल में पढ़ा था। “नीरज जी” जब एटा आते थे तो उन्ही के घर रुकते थे। उस बस की सब से पीछे की सीट पर डिप्टी रेलवे मिनिस्टर “रोहन लाल चतुर्वेदी” जी बैठे थे उन के पास रिवाल्वर भी थी। बस ठसाठस भरी थी। आगरा से बहुत देर से चली। सुन्ना नहर तक पहुँचते पहुँचते रात के 11:30 बज गये रात के अँधेरे में अचानक बहुत सारी बाहर से आवाजें आने लगीं।

“बस रोको।।। रोको।।।। रोको।।।। रोको।।।।”

सुन्ना नहर पर रास्ता सँकरा था और मोड़ बहुत थे, पेड़ काटकर रास्ता रोक दिया गया था, बस की सारी खिड़कियाँ खोल कर टॉर्च की रोशनी में कई लोग अन्दर घुस आये बस पर कब्जा कर लिया। गन्दी गन्दी गालियाँ बरसाते हुये एक एक को तलाशी लेकर उतारते जाते लोगों की जेब का चिल्लर भी नहीं छोड़ा। औरतों के कानो और गले का भी उतरवा लिया। डिप्टी रेलवे मिनिस्टर की रिवाल्वर भी ले ली। सुआराम की वही गलती बहुत बड़ी थी एटा अभी केवल छे मील दूर था। काँड के बाद बस सब से पहले पुलिस स्टेशन पहुँची बस ड्राइवर ने रिपोर्ट लिखवाई। कारवाई हुई और चार दिन बाद ही सुआराम गैंग को तहस नहस कर दिया और बेचारा सुआराम।।।।।।।।।।ओह!!

मुझे याद आई यह कहावत, “बुरे काम का बुरा नतीजा”।

□□□



सुरेन्द्र सुकुमार की बातकही...

मूलचंद ऊर्फ मुलुआ ऊर्फ मालवा पहलवान

ह

मारे कस्वा कौड़ियागंज में कथाकार जैनेन्द्र कुमार के अतिरिक्त एक और विश्वप्रसिद्ध हस्ती हुई थी पर बेहद दुःख की बात यह है कि मालवा पहलवान को कोई जान नहीं पाया

उनका पूरा नाम मूलचंद था पर घर में उन्हें मुलुआ कहते थे बहुत ही दुर्दिन में उनकी मृत्यु हो गई

मुलुआ का परिवार गरीबी से तंग आकर कौड़ियागंज छोड़ कर दिल्ली चला गया था उस समय मुलुआ की आयु लगभग 10 साल की थी मुलुआ गठीले वदन का साँवले रंग का लड़का था

मुहल्ले में शैतानी करता अपने साथ के लड़कों को मारता पीटता था शिकायतें आती तो मुलुआ के पिता बहुत लज्जित होते मुलुआ को मारते पीटते

एक दिन एक सरदार जी की नजर मुलुआ पर पड़ी उनकी देहयष्टि देख कर वो मुलुआ के पिता के पास गए और कहा कि वो उन्हें अपने पुत्र को दे दें हम इसे पहलवान बनाएंगे

अंधा क्या चाहे एक आँख वो तो खुद मुलुआ से मुक्त होना चाहते थे उन्होंने सरदार जी को मुलुआ का हाथ पकड़ा दिया

सरदार जी मुलुआ को अपने साथ पंजाब ले गए और पहलवानी सिखाने लगे

आस पास के शहरों के दंगलों में मुलुआ को लड़ाने लगे

मुलुआ जहाँ भी जाता जीत कर ही आता अब वो जवान हो गया था और बड़े बड़े दंगलों में जाने लगा और जीतता रहा धीरे धीरे लोगों की और सरकार की नजर उनके ऊपर पड़ी और

देखते देखते वो पहलवानी में पंजाब का प्रतिनिधित्व करने लगे

पंजाब में अपना झंडा फेरा कर वो भारत की ओर से लड़ने लगे सबसे बड़ी बात यह थी कि वो एक भी कुश्ती नहीं हारे थे

गठीला वदन पाँच फिट छः इंच लम्बा

अंग्रेजी अखबारों में मुलुआ के नाम की धूम मच गई पर हुआ यह कि उन अखबारों ने मुलुआ का नाम मालवा लिख कर प्रकाशित किया अब वो मुलुआ से मालवा पहलवान बन गये थे

वहीं जापान की एक महिला पहलवान इन पर फिदा हो गई और शादी का प्रस्ताव रख दिया और शर्त यह रखी कि उसके साथ जापान में ही रहना पड़ेगा पर मुलुआ में तो देशभक्ति कूट कूट कर भरी थी और वो पहले से ही शादी शुदा थे सो उन्होंने इनकार कर दिया

भारत आकर उनका बहुत सम्मान किया गया पढ़ा लिखा न होने के बाद भी दिल्ली सरकार ने उन्हें बिजली विभाग में खम्बे गाड़ने के लिए गड्ढा खोदने के काम पर लगा लिया उनकी पत्नी सरकारी स्कूल के सामने चूरन चटनी बेचने लगी इधर भारत सरकार ने उन्हें अर्जुन पुरस्कार से नवाजा वो यमुना किनारे एक झुग्गी झोपड़ी बस्ती में रहने लगे अब मालवा की जिंदगी कुछ ढर्रे पर आई थी कि अचानक यमुना में बाढ़ आ गई और उनका सारा सामान सर्टिफिकेट पदक सब बह गए केवल कुछ पदक और और स्वर्ण



साँवला रंग

फिर तो कमाल ही हो गया मुलुआ भारत का प्रतिनिधित्व करने लगे उनकी एक अलग ही पहचान बनने लगी और एक दिन ऐसा आया कि मुलुआ टोकियो ओलंपिक में भारत की ओर से लड़ने गये और वहाँ उन्होंने स्वर्ण पदक जीता उस ओलंपिक में दौड़ने के लिए मिलखा सिंह भी गए थे और उनको भी स्वर्ण पदक मिला था

पदक बच गए

अब फिर से मालवा की जिंदगी पटरी से उतर गई

एक दिन मिलखा सिंह ने उन्हें गड्ढा खोदते हुए देख लिया उनकी आँखों में आँसू भर आए और उन्होंने मालवा को अपने पास से 50000 रुपये दिए और कहा कि सरकार से बातचीत करके तुम्हारे लिए कुछ और सहायता की व्यवस्था करवाते हैं उन्होंने लिखा पढ़ी थी की

पर कोई नतीजा नहीं निकला
नीचे के चित्र में हमारे पास बीच में मालवा
पहलवान खड़े हैं

यह एकदम सच है जकार्ता में नहीं हुए थे
टोकियो में हुए थे मालवा हमारी कल्पना का
पात्र नहीं है सच्चा पात्र है

यह चित्र तो तबका है जब हमने कौड़ियागंज में
दंगल कराया था और उनको मुख्यअतिथि के
रूप में बुलाया था हमारी गोद में हमारी बेटी है
यह सब आगे की क्रिस्त में पढ़ने को मिलेगा

एक बार हमने कौड़ियागंज में एक विशाल
दंगल कराया और मुख्यअतिथि के रूप में
मालवा को बुला कर सम्मान किया था और
कार्यक्रम की अध्यक्षता करने के लिए बाबा
हरदेव सिंह जो उस समय अलीगढ़ में एडीएम
सिटी के पद पर आसीन थे को बुलाया था

हम लोगों ने मालवा का भव्य स्वागत किया
दंगल बहुत ही अच्छा हुआ दंगल के अंत में
हमने मालवा से आग्रह किया कि एक कुशती
भी लड़ कर दिखाएँ उसने बिना कपड़े उतारे
सबसे बड़े पहलवान को दो पल में चित्त कर
दिया हमने उन्हें खूब धन धान्य दिया शॉल
ओढ़ाकर उनका सम्मान किया

तब उन्होंने बताया कि एक बार दूरदर्शन दिल्ली
वाले उनके घर आए और बोले कि आपका
इंटरव्यू लेना चाहते हैं इसलिए आप अपने
मैडिल आदि दे दीजिए ये स्वर्ण पदक बहुत गंदे
हो गए हैं इन्हें चमकाना पड़ेगा वो लोग स्वर्ण
पदक ले गए और अबतक वापस नहीं आए
अब हमारे पास कुछ भी ऐसा नहीं है जिससे
हम यह सिद्ध कर सकें कि हमने कभी जकार्ता
एशियाई खेलों में स्वर्ण पदक जीता था या हमें
अर्जुन पुरस्कार मिला था

हमको बाद में पता चला कि दिल्ली के "खेल
गाँव " में मालवा के नाम की एक लेन है खेल
गाँव में अर्जुन पुरस्कार विजेता खिलाड़ियों के
नाम की लेन है पर बेचारे मालवा ने आजतक
उस लेन को नहीं देखा है हमने भी उनके लिए
कौड़ियागंज में आवास के लिए स्थान देने के
लिए और उनके नाम से एक अखाड़ा बनवाने
के लिए बहुत की पर कोशिश करने के बाद भी
कुछ नहीं हो पाया बाद में पता चला कि
मालवा बीमार होकर मर गए पत्नी बच्चों का
क्या हुआ कुछ पता नहीं चला इस तरह
मूलचंद उर्फ मुलुआ उर्फ मालवा पहलवान का
अंत हुआ यह है हमारे देश में खेल और
खिलाड़ियों का सम्मान

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

दिखता साफ सुथरा है तन यहाँ
जो दिखा दे मन के भीतर की सच्चाई

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

है छाया उजाला हर तरफ़ दूर तक
जो दिखा दे व्याप्त अंधेरा समाज का

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

दानवीर सज्जन शालीन विनम्र दिखते

जो दिखा दे पल में बदलते चरित्र

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

मिलते हैं अच्छे से एक दूसरे से

महफ़िल में

घर में बसे दो घर दिखा दे

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

हैं सभी ऐशोआराम बच्चे के पास

जो बचपन का अकेलापन,

मायूसी दिखाएँ

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

छोड़ मोह माया, रब में खो जाओ

प्रवचन देने वाले का प्रपंच दिखाएँ

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

अपनी राह चलती सकुचाती सी लड़की

सहती कितनी बेशर्म आँखें जो बताएँ

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

था माँ की आँख का तारा,

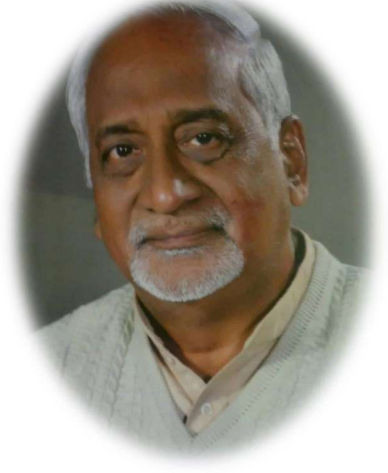
आज दिखाता आँखें

रहे ज़िन्दा चाहकर मर भी ना पाये

माँ बाप की लाचारी दिखाएँ

वो आँखें कहाँ से लाऊँ

नीरू मित्तल 'नीर'



दो गज़लें

: 1 :

हम भी कैसा कमाल करते हैं
दिन में जीते हैं, रात मरते हैं

दिलको जिसने बना दिया ज़ख्मी
उसकी यादों में आह भरते हैं

यूँ ना रोको उसे अरे साहिब
आइने में सभी संवरते हैं

इतना बख़्शा है मालो ज़र रब ने
अब ज़मीं पर न पाँव धरते हैं

खामियाँ जो बताएँ अच्छा है
खामियों से सभी निखरते हैं

: 2 :

घोंसले से फिर उठी हैं दर्द की शहनाइयाँ
आज फिर एक ज़िंदगी लेने लगी
अंगड़ाइयाँ

जब कभी भी घेरता है बोझ यादों का मुझे
चीख उठती हैं तुम्हारे बिन मेरी तनहाइयाँ

ऐसा न हो देख ही पाऊँ न अपना आशियाँ
रब मेरे मुझको न देना इतनी भी ऊँचाइयाँ

दोस्ती हर हाल में सूरज से रखना दोस्तो
जाते जाते छीन न ले आपकी परछाइयाँ

काश वो नगमें कहीं कि जिनसे छा जाए
बहार

चहचहा उठे परिन्दे देखकर अमराइयाँ

- अशोक जैन, गुरुग्राम

मैं घरे की लौकी साधो

(संस्मरण)

रामानुज अनुज

क

था पुरानी है किंतु अब यह कथा कहने योग्य है। मैं जब बच्चा था तब की बात है। मैं अपनी याददाश्त को धन्यवाद देते हुए कथा को लिखने जा रहा हूँ। भोले सिंह, गाँव के सबसे बुजुर्ग व्यक्ति थे। वे केवल सोचने का काम करते थे और कुछ करते-धरते किसी ने उन्हें आज तक देखा नहीं था, इसीलिए कुछ लोग उन्हें सोचन सिंह भी कहने लगे थे। कुछ तो उन्हें सोचन से सौचन तक भी कहने लगे थे। वे किसी उपनाम पर कभी आपत्ति जाहिर नहीं किए। सरल-सहज व्यक्ति भोले का वास्तविक नाम केशव सिंह था। उम्र यही कोई सत्तर से अस्सी के बीच की, अंदाज यही कहता है। वास्तविक उम्र किसी को पता नहीं थी। पूछने पर यही कहते, 'जउने साल दिल्ली से लैके कलकत्ता तक की धरती डोली थी, तब अपुन पैदा होबे थे।' अब उम्र का सही पता कैसे हो, दिल्ली तो डोलती ही रहती है, यही हाल कलकत्ता का है। दिल्ली से देहली, कलकत्ता से कोलकाता कर देने से डोलना बन्द नहीं हो

सकता है। जरूरत है उन डोलनशील तत्वों को गंगासागर में बहा आने की, मसलन नेताओं की टोपी से लेकर जूती-जूता तक---कूड़ा-करकट बहुत है, गंगासागर तक ले जाना सबके वश की बात नहीं है, इसलिए नवीन परीक्षा प्रश्न पत्रों की तर्ज में अथवा का जुगाड़ भी है, चाहें तो होली में जला दें। अचूक उपाय है, राख तक ढूँढ़े नहीं मिलेगी।

केशव सिंह एकांत प्रिय व्यक्ति थे। सोचने के लिए एकाकी होना जरूरी होता है। पत्नी के



निधन के बाद उन्हें एकांत की कोई कमी नहीं रही। अब वे घर में रहें या वन में रहें, कोई उनका एकांत छीनने वाला नहीं था। पत्नी जब

तक रहीं, उन्हें सोचने के लिए कभी सम्पूर्ण एकांत नहीं मिला। वे टोंकती रहतीं, 'काये जी कइसे देह उघारे बइठे हो?' कमीज का सेधान रखन निता आय?

तब भी वे कोई उत्तर नहीं देते थे। पत्नी जी पत्नी धर्म निभाकर पीछे मुड़ हो जातीं। वे सोचते रह जाते, 'मुई कमीज क्या हुई, भूत की लँगोटी हो गई, न मन करे तब भी पहनना जरूरी रहता है। भई हम मरद है कमर के ऊपर उधार रहने को गांधी जी भी अनुमति देते हैं। कमर के ऊपर कपड़े न पहनने पर भी पुरुष शालीन और शिष्ट है, वह महात्माओं के वर्ग में आ जाता है।'

केशव सिंह अचानक गुम गए। वैसे गुमसुम व्यक्ति साकार होने पर भी गुमा हुआ ही समझा जाता है। इस बार वे सम्पूर्ण काया के साथ गुम हुए थे।

हुआ कुछ यूँ कि उन्हें गुमने के तिथि को दोपहर से पहले भूख लग आई। बड़े बहू से पूछे थे कि भोजन में कितनी देर है। बहू ने कड़ी रोटी की तरह कड़ा जवाब दिया था। वे बड़ी देर तक भूख को गरियाते रहे, 'कमबख्त समय का ध्यान रखती, सुन ली न, मेरी फजीहत में तुम्हें आनन्द आता है।' पर भूख तो भूख है, वह कलाई में घड़ी नहीं बांधती। सम्भवतः बहू के कड़े शब्द उनके सशरीर नदारत होने का सबब



बना। एकांत में जीने वाले को कड़ाई पसंद नहीं है, बहू क्या जाने?

सास के बाद घर की बड़ी बहू ही गृह मंत्रालय सम्हालती है। उसे कड़क रहने की मजबूरी होती है। वह नियमों का कड़ाई से पालन करवाती है, ससुर भले ससुरा हो जाए, बहू का बाजा धीरे नहीं बजेगा।

दोपहर से शाम हुई, रात आई चली गई, लेकिन केशव की छाया तक घर नहीं लौटी। सबेरे घर में विमर्श हुआ, तदनु, बीच सुलह हुई कि सुबह का भारी नाश्ता पेट में भरकर उन्हें ढूँढ़ने निकला जाए। केशव सिंह के दो लड़के हैं। दोनों में बंटवारा हो गया था। माता-पिता बड़े के हिस्से में आए थे। यह विमर्श अपने-आप फेल हो गया। ढूँढ़ने के लिए कोई घर से निकला ही नहीं।

शाम को मीटिंग बैठी, जिसमें उनके बेटों के साथ गाँव से समझदार लोग भी बुलाए गए। मुझे भी समझदार मानकर बुलाया गया। यद्यपि मैं अभी ठीक से समझदार नहीं हुआ हूँ। अक्सर बैल को माता और गाय को पिता व भैंस को भाभी कहने की भूल कर बैठता हूँ। बहरहाल मीटिंग बैठी, बड़े ने रोकर पिता जी के घर से गायब होने की सूचना दी। गाँव में अक्ल के थानेदार कहलाने वाले मोती गुरू गला साफकर बोले, 'किसी ने उन्हें कुछ कहा तो नहीं?' 'नहीं कक्का, उन्हें किसी ने कुछ नहीं कहा।' बड़ा बेटा बोला।

'घर से गायब होते समय क्या पहने थे पिता जी?'

'कमर में पंचा लपेटे थे।' यह उत्तर अंदर से प्राप्त हुआ।

'कुछ अंगूठी बगेरा?'

'न-न वे अंगूठी नहीं पहनते थे।'

'पुलिस को इत्तिला की जाए?'

'नहीं गुरू! पुलिस से अच्छा हमीं ढूँढ लेंगे।' मैं बोला।

'वो तो ठीक है पर कानूनी दांव-पेंच भी समझो। ढूँढ़ने पुलिस नहीं जाएगी, यह पक्का है, परन्तु कल को पुलिस यह न कहे कि आप लोगों ने मामले को दबाया है। उल्टा वह हमीं लोगों को फ्रांस सकती है।'

मोती गुरू वैसे ही अक्ल के थानेदार नहीं कहलाते थे। हजार थानेदारों की आत्माओं से उनका निर्माण हुआ था। उनका कहना सही था कि रिपोर्ट करने पर पुलिस केशव कक्का को ढूँढ़ने नहीं जाएगी, किंतु वह परेशान भी नहीं करेगी।

पुलिस में रिपोर्ट करने के लिए केशव का बड़ा लड़का जागरण सिंह गाँव के दो चार आदमियों को लेकर थाना गया। मुंशी जी सुलझे हुए पुलिस मैन थे। उनकी आदत थी, वे रिपोर्ट लिखने में बहुत आनाकानी करते थे। ऐसे-ऐसे प्रश्न करते कि रिपोर्ट के लिए आया हुआ व्यक्ति डरकर भाग जाए।

'तो तुम्हारा बाप गुम गया?' मुंशी जी छूटते ही बोले।

'जी, वे कहीं चले गए।'

'मतलब गुम गए।'

'जी।'

'ताज्जुब है, लड़की गुमती है, लड़का गुमता है, कुछ दिन बाद दोनो शादी कर घर लौट आते हैं, पुलिस उलझी रहती है। आए दिन हरेक का कुछ न कुछ गुमता ही रहता है। अब कल की बात है मंत्री साहब का कुत्ता गुमा है, मैडम का रो रोकर बुरा हाल है। भैया, हम गुमने के दौर से गुजर रहे हैं, क्या करोगे रिपोर्ट लिखवाकर, सारी पुलिस तो लगी है मन्त्रिआइन के कुकुरा ढूँढ़य मा, अब को तोहरे बाप का ढूँढ़या।'

'साहब आप रिपोर्ट भर लिख लो, ढूँढ़ने का काम हम लोग कर लेंगे।' जागरण सिंह अक्ल जगाकर बोला।

'मामला पेचीदा है। इस पर कुछ भी लिखने लायक नहीं है। आप लोग ऐसा करो, बाप को ढूँढ़ने की कोशिश करो। मिल जाए तो जय-जय न मिले तो गय गया।'

'आप रिपोर्ट लिख लो साहब, हमें डर है रिपोर्ट न लिखाने के जुर्म में हमें जेल न जाना पड़े।' बड़े आरजू-मिन्नत के बाद मुंशी जी ने रिपोर्ट लिख ली और ताकीद की, मिलने पर पुलिस को सूचित किया जाए। विजेता भाव से चेहरे पर मुस्कराहट लिए हुए वे थाने से लौट चले, जैसे पाकिस्तान को क्रिकेट में एक रन से हरा दिए हो। अब केशव सिंह को ढूँढ़ने की जिम्मेदारी तय करने के लिए बैठक की गई। गाँव की बैठक लोकसभा या विधान सभा की बैठक से अलग होती है। इसमें गाँव के कुछ आदमी, कुछ औरतें और दोचार कुत्ते आते हैं। बस इतने में मीटिंग हो जाती है, औरतें खबरनवीस के

रोल में होती है। खबरें, ये सचित्र प्रकाशित करती हैं और कुत्ते, बेचारे लालच में आते हैं कि इतने आदमी जुटे हैं तो कुछ खाना-पीना तो होगा ही।

मोती गुरु की अध्यक्षता में मीटिंग हुई। सर्वसम्मति से यह तय हुआ कि केशव सिंह की तलाश में चारों दिशाओं में टोली रवाना हो। टोली रवाना हुई, कोई उत्तर, कोई दक्षिण, कोई पश्चिम, कोई पूरब को चली। मैं दक्षिण वाली टोली में शामिल था। हम लोग केशव सिंह की तलाश में हर जगह गए, नदी, पहाड़, गाँव, शहर, जंगल, हर जगह जाकर ढूँढ़े, मगर वे गधे की सींग की तरह गायब हुए सो हो गए, वे मिलने के लिए गायब थोड़ी हुए थे। सभी टोलियों के खोजी सदस्य, सूर्यमुखी की तरह मुँह लटकाए, सिर में जूते बाँधकर लौट आए। फिर मीटिंग बैठी, इस बार सर्वसम्मति के प्रस्ताव पास हुआ कि केशव सिंह को मरा हुआ मानकर उनके कृत्य कर दिए जाएं, क्योंकि वे चारों दिशाओं में मौजूद नहीं हैं। विधि विधान से केशव का पुतला बनाकर अग्नि संस्कार हुआ, दशगात्र और तेरहवीं की गई। ब्राह्मण भोज हुआ, कुत्ते और कौओं को भी भोजन प्रसाद मिला।

चार साल बाद गाँव में एक साधु आया, चेहरे पर सफेद जटाजूट की वजह से उनकी पहचान सहज नहीं थी। अनुमान मुताबिक वे केशव सिंह की तरह लगते थे। साधु महाराज ने भुतहा तालाब में बने मन्दिर में डेरा जमाया। दो-चार दिन रुककर वे गाँव छोड़कर चले गए। साधु बाबा के चले जाने से मुझे मानसिक क्लेश हुआ, क्योंकि मुझे यकीन था कि यही केशव हैं। विनय करता तो सम्भव है, वे अपना परिचय बता देते। मैं अब उन्हें दूर के गाँवों में तलाशने लगा पर कामयाबी नहीं मिल रही थी। शाम को घर लौटकर आता तो पिता जी की डाँट खानी पड़ती, 'दिन भर आवारा घूमता रहता है, पढ़ाई-लिखाई पर बिल्कुल ध्यान नहीं है।' माता जी, अपनी तरह से समझाती, 'देख, पढ़ाई में मन लगा, साधुआ के पीछे मत भटक। वह केशव होगा भी तो हमें क्या मिल जाएगा।' किसी की नसीहत काम नहीं आई, मैं उन्हें तलाशने जाता ही रहा। एक दिन मेहनत रंग लाई, वे दूर के गाँव में भटक-भटककर गाते हुए मिल गए,

'मैं घूरे की लौकी साधू!'

पूछन पर हम न न करते,

बिन पूछे हम हाँ की---साधो,

मैं दौड़कर उन्हें पकड़ लिया। वे पूरी ताकत लगा दिए लेकिन मेरी पकड़ से मुक्त नहीं हुए। हारकर बोले, 'बच्चा, तू क्या चाहता है।' 'आप केशव सिंह हैं।' मैंने पूछा। 'बच्चा, अभी तू नासमझ है, जिस दिन दुनिया के फरेबों को समझ लेगा मेरी तरह साधू बन जाएगा। मैं न तो केशव हूँ न अर्जुन।' 'मतलब आप साधू नहीं हैं, बन गए हैं।' 'ठीक समझा बच्चा।'

साधु महाराज झुके और मेरे कान में धीरे से बोले, 'जब तू पहचान ही गया है तो तुझे बताने में सब हर्ज नहीं है, पर, किसी को बताना नहीं। मेरे पास कुछ रुपए हैं, तुम केशव के दोनों लड़कों को बराबर से बाँट देना। तुम पर विश्वास करता हूँ, ईमानदार भी हो।'

'बाबा आप नौकरी करते हैं? किस पद में हैं? कितनी तनखा मिलती है?'

'बहुत नादान हो बच्चा, मैं नौकरी नहीं करता, मैं नए ढंग की खेती करता हूँ। लफ़्ज़ों की खेती, इसे लफ़्फ़ाजी कह सकते हो। इसमें बड़ा आनंद है, भोजन-सत्कार के अलावा नगद नारायण मिल जाते हैं।'

'तो आप केशव सिंह हो, मैं आपको ढूँढ़ लिया ना।'

'गलतफहमी में मत रहो बच्चा, मैं पहले केशव था, अब केशवानंद हूँ।'

मैं एक हजार रुपए के नोट लाकर उनके बड़े बेटे को दिया था। उसने बहुत बड़े-बड़े सवाल किए, जैसे, 'ये रुपए मुझे क्यों? किसने दिए?'

मैं सवालों से घबराकर भाग खड़ा हुआ। आगे क्या हुआ? मैं नहीं जानता, गाँव छोड़कर मैं ननिहाल भाग आया था। फिर दोबारा आज तक अपने गाँव नहीं गया।

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर, दिल्ली 110092



कविताएं व विषमताएं

सहचर हैं

अमीरी - गरीबी

ऊंचा - नीचा

ये सब स्वरूप हैं

विषमताओं के

जिनसे खाद-बीज ग्रहण कर

फलती-फूलती हैं कविताएं

मानव भले अमर ना हो

पर कविताएं

अजर - अमर रहेंगी

क्योंकि मुझे ज्ञान है

विषमताओं के अमरत्व का,,,

21 मुफ्त की रोटी

रोटी मुफ्त की

लेने को अड़े हैं

इसीलिए

चौराहे पर खड़े हैं

जिसने त्याग दी

मुफ्त की रोटी

अपने पैरों पर खड़े हैं,,,

राजेश पाठक

पृष्ठ 58 का शेष

तस्वीरों में अपने को कहीं भी न पा रही थी। न ही आलोक जी ने कहीं भी उसके नाम की चर्चा ही की थी।.... हुंह ...गर्दन झटकती खिड़की से बाहर देखती खिड़कियों की तरफ सरक गई थी।

इधर आलोक जी समारोह में व्यस्त जब स्टेज पर माइक पकड़ कर खड़े हुए तो उनकी आंखों में सिर्फ एक लड़की थी जो मोबाइल में कुछ लिख रही थी। अचानक आवाज भरभरा सी उठी किंतु अपनी आवाज को संयत कर बोल उठे मेरे अजीज दोस्त तुम जहां भी हो शुक्रिया , आज मैं जो भी हूं तम्हारी प्रेरणा से हूं । जो भी लिखा उसका श्रेय सिर्फ तुम को देता हूं । मेरे अजीज जो मैं तुमसे कभी कह नहीं पाया वो सब लिख दिया है कहानियों में । मेरे हृदय की सारी व्यथा , अनकहा सा सिर्फ महसूस करने वाला प्रेम और तुम्हारे प्रति उत्पन्न श्रद्धा सब मेरी कहानियों और कविताओं में उपस्थित हैं । तुम एक संपूर्ण स्त्री ही नहीं संपूर्ण सृष्टि हो । मेरे माता-पिता जिन्होंने मुझे जन्म दिया उन्हें , मेरी जीवन संगिनी, मेरे संगी साथी और मेरा परिवेश सबको हृदय से धन्यवाद ।

एक सप्ताह बाद डाकिया एक पैकेट दे गया जिसमें एक बुक थी जिसका शीर्षक था"सचिवालय का बाबू और सड़क छाप लड़की"। प्रथम पेज पर धन्यवाद ज्ञापन में दीक्षा सिंह के लिए धन्यवाद के साथ और भी बहुत कुछ लिखा था ।..... आंखें नम हो उठींशुक्रिया दोस्त..... और दीक्षा फिर से कुछ लिखने लगी थी ।
एक कहानीजो अधूरी थी लेकिन पूरी थी।

□□□

लेख में व्यक्त विचार लेखक के हैं उनसे संपादक मण्डल या संपर्क भाषा भारती पत्रिका का सहमत होना आवश्यक नहीं है। किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय-क्षेत्र नई दिल्ली रहेगा। प्रकाशक तथा संपादक : सुधेन्दु ओझा, 97, सुंदर ब्लॉक, शकरपुर,

संपर्क भाषा भारती के आगामी तीन विशेषांक

जून 2023



त्रिलोक दीप (लब्ध प्रतिष्ठित पत्रकार)

जुलाई 2023



सुरेन्द्र सुकुमार (लब्ध प्रतिष्ठित कथाकार एवं व्यंग्य कवि)

अगस्त 2023



डॉ धनंजय सिंह (लब्ध प्रतिष्ठित नव-गीतकार)